प्रकाशक—
कमलापति खत्री
लहरी बुक डिपो,
वाराणसी।

PRATISHODH
Rs. 3/50

ग्यारहवां संस्करण

१९७३ [मूल्य—३/५०

मुद्रक—
लहरी प्रेस,
वाराणसी।

प्रतिशोध

उपन्यास

पहिला बयान

घोर जगल के बीच एक प्राचीन शिवालय है जिसे प्राचीन-तर पीपल ने अपनी गम्भीर छाया में छिपाया हुआ है। मन्दिर बहुत छोटा ईंट चूने का बना हुआ हैं, और जमाने ने उसे एकदम काला कर दिया है, साथ ही साथ उस पीपल तथा चारो तरफ के अन्य ऊंचे पेड़ों की घनी छाया में वह कुछ इस तरह छिपा हुआ है कि दूर से अचानक दिखाई पड़ना भी कठिन है, हाँ उसकी ऊंची पताका जो कई बांसों को एक में जोड़ कर पीपल की डालियों को फोड़ती हुई आकाश में खूब ऊपर उठा दी गई है बहुत दूर दूर से दिखाई पड़ती है और उस जङ्गल से आने जाने वालों के लिए पथ-प्रदर्शक का काम करती है।

इस समय दोपहर का वक्त है फिर भी मन्दिर के अन्दर की प्रस्तरमयी शिव-मूर्ति के सामने मोटी बत्ती का घी का एक दिया

जल रहा है। इस शिव-मूर्ति का भाव कुछ अद्भुत सा है। यद्यपि काल ने इस महा-काल की आकृति को मिटाने की भी कुछ कम चेष्टा नही की है फिर भी इसको देखने से अनायास ही समझ में आ जाता है कि सती-दाह का समाचार सुन क्रोधित शिव दक्ष-यज्ञ विध्वंस करने को उद्यत हुए हैं। मूर्ति काले पत्थर की है और उसके चेहरे से क्रोध का कुछ ऐसा भीषण भाव प्रकट हो रहा है कि देख कर भय लगता है।

मूर्ति के सामने पद्मासन मारे एक योगी बैठा है। आंखें बन्द हैं, शरीर अचल है, स्वांस का आवागमन तक वन्द सा है। प्राण मन और चित्त की गति को वश में किए योगी ध्यान-मग्न है।

उससे कुछ हट कर पीछे की ओर दो तेजस्वी नवयुवा बैठे हुए हैं। बलिष्ठ शरीर, चमकदार आंखें, घनी-घनी परन्तु छोटी दाढ़ी और सामने रक्खा कटार देख अचानक यह कहना कठिन है कि ये डाकू है या भक्त, फिर भी इनके चेहरे से श्रद्धा और विश्वास मानो टपक सा रहा है और ये दोनों ही हाथ जोड़े एकटक उस योगी की ओर देख रहे है।

अचानक योगी का ध्यान भंग हुआ, शरीर में एक कम्प सा हुआ, और रोमांच होकर मुंह से कुछ अस्पष्ट शब्द निकले जिसके साथ ही उसने 'महाकालाय नमः' कह कर आंखें खोल दी और जरा घूम गया। पोछे बैठे दोनों युवकों ने सामने होकर श्रद्धा के साथ जमीन पर लोट साष्टांग दण्डवत की और आशीर्वाद

केसाथ योगी ने उन्हें उठने का संकेत किया, दोनों हाथ जोड़े हुए उसके सामने बैठ गए।

एक क्षण तक सन्नाटा रहा, इसके बाद बहुत ही धीरे धीरे योगी कहने लगा—

"महाबीर, रघुनाथ! तुम दोनों ठीक समय पर आये और इससे मुझे अत्यन्त प्रसन्नता हुई। भगवान शिव की कृपा से आज मैं इस देश का भविष्य देखने में समर्थ हुआ हूं। मैंने देखा है कि यह अब अपनी दुर्दशा के कोर पर आ गया है और इसके पापों का अन्त होने वाला है। गुरुजनों की शिक्षा न मानने का फल इतने दिनों तक भोग कर अब यह आंखे खोल रहा है। समय से दूर रह कर, काल को गति को न देख कर, इसने जो भूल की थी उसका फल इसे काफी मिल चुका। अब इसके दुर्दिन का चक्र घूम गया है और शीघ्र हो यह अपना पूर्व स्थान ग्रहण करेगा, परन्तु.....

नवयुवक०। परन्तु क्या गुरुदेव?

योगी०। इसके लिए इसे बलि देनी होगी, सुख की बलि, स्वार्थ की बलि, शान्ति की बलि, शरीरों की बलि—देकर ही इस देश के निवासी अपनी अभिलाषा पूरी कर सकेंगे।

नवयुवा०। (उत्साह के साथ) ओह, इसके लिए तो हम लोग पूरी तरह से तैयार ही हैं! आपकी आज्ञा पाते ही सैकड़ों नहीं हजारों देश-वासी अपना सिर अर्पण कर देंगे। इस समय हजारों दिल उछल रहे हैं पर अपने उद्धार का कोई मार्ग न पाते

के कारण तड़प कर रह जाते है, उन्हें कोई रास्ता दिखा देवे भर का बस काम है।

योगी०। महाकाल ने वह रास्ता दिखा दिया है।

युवा०। हम लोगो को उपदेश दीजिए कि वह क्या है ?

योगी०। पुत्रो, वह है शक्ति-स्थापन ! शक्ति की सहायता के बिना भगवान भूतनाथ स्वयम् भी कुछ नही कर सकते। इस देश के निवासी इस समय शक्ति-हीन हो रहे हैं। सब से पहिले उन्हें शक्ति प्राप्त करनी होगी। अगर वे चाहते हैं कि अपनी पराधीनता को दूर कर स्वाधीन बनें या अपने देश मे अपना राज्य स्थापित करे तो उन्हें सब से पहिले शक्ति-शाली बनाना पड़ेगा।

युवा०। सो तो ठीक ही है, पर उसका कोई उपाय ?

योगी०। उपाय ? उपाय बहुत सहज है, जिस प्रकार बिना मृत्यु के जीवन नही उसी प्रकार बिना संघर्ष के शक्ति नही।

युवक०। इसका क्या मतलब ? स्वाधीनता प्राप्त करने के लिए हम लोग अपनी वर्तमान अंगरेज सरकार से संघर्ष करने के लिए तो तैयार ही हैं......

योगी०। नही नही, उस सघर्ष से मेरा मतलब नही।

युवक०। तब किस संघर्ष से आपका मतलब है ?

योगी०। आपस मे, प्रजा और प्रजा के बीच में, संघर्ष पैदा करना होगा।

युवक०। आपस में संघर्ष ? प्रजा में संघर्ष ? पर उससे तो उलटा शक्ति-क्षय होगा !!

योगी०। कदापि नहीं ! क्या तुम जानते नहीं कि प्रकृति और पुरुष के संघर्ष से ही यह विश्व-ब्रह्माण्ड चल रहा है? जीवन और मृत्यु का संघर्ष, स्थिति और लय का संघर्ष, भूत और भविष्य का संघर्ष, बचपन और वार्धक्य का संघर्ष, सभी ओर संघर्ष ही संघर्ष तो है! जिस दिन यह संघर्ष बन्द हो जायेगा उसी दिन इस सृष्टि का अन्त भी हो जायेगा क्या यह तुम नहीं जानते? संघर्ष ही जीवनी-शक्ति है। इस देश में यदि शक्ति उत्पन्न करना है तो हमें यहाँ भी संघर्ष पैदा करना पड़ेगा।

युवा०। (सिर झुका कर) वह कैसे होगा गुरुदेव ?

योगी०। इस देश में कई भिन्न-भिन्न जातियाँ रहती हैं, हमें उन सभों में परस्पर विद्वेष पैदा करना होगा।

दोनों युवा०। (चौंक कर) हैं! देश की जाति जाति में विद्वेष !! यह तो रहा सही शक्ति का भी नाश कर देगा ?

योगी०। (हंस कर) नही, यह तुम्हारा भ्रम है, इस देश के सभी निवासियों में इस समय बड़ा प्रेम है। परस्पर एक दूसरे के गले लग रहे है, एक दूसरे की सहायता के लिए प्राण अर्पण किये डाल रहे हैं, हिन्दुओं के तीर्थों की रक्षा के लिये मुसलमान खड़ा होता है और मसजिदों को बचाने के लिये ब्राह्मण आगे बढते हैं। फल क्या है देखते हो? परस्पर का विश्वास, और विश्वास से उत्पन्न शान्ति। शान्ति कायरता की जननी और निरुत्साहिता की भगिनी है। इस एकता, इस शान्ति, इस मैत्री के कारण यहाँ की सभी जातियाँ समझ रही हैं कि

उनमें ऐक्य से उत्पन्न वल आ गया है, पर वास्तव में उनमें शक्ति-हीनता आ गई है। मनुष्य को जव डर रहता है तो वह सतर्क रहता है, डर न होने से वह लापरवाह और अक्षम हो जाता है। इस देश के निवासियों का आज का परस्पर का ऐक्य ही इस समय वही अक्षमता उत्पन्न कर रहा है, कारण हिन्दू समझता है कि काम पड़ने पर मुसलमान हमारी मदद करेगा और शूद्र समझता है कि मौके पर ब्राह्मण उसके काम आयेगा। फल यही हो रहा हैं कि सभी अपनी अपनी शक्ति वढ़ाने का उद्योग तो करते नहीं दूसरे की शक्ति की अपेक्षा किया करते हैं और इस प्रकार स्वयम् बलहीन वनते जा रहे हैं। इतना तो तुम अच्छी तरह समझते हो होगे कि जो दूसरे के वल का भरोसा करता है वह अपने बल से तो हाथ धोता हो है अन्त में दूसरे की भी आशा और सहायता को खो वंठता है।

युवा०। (रुकते रुकते) जी हां ऐसा कुछ होता तो है।

योगी०। इसी लिये मैं कहता हूँ कि अगर हमें इस देश को शक्तिशाली बनाना है तो यहाँ के निवासियो को आपस में लड़ा देना चाहिये। पहिले उनमें फूट उत्पन्न करनी चाहिये, और इसके बाद परस्पर एक का दूसरे पर अविश्वास। हर एक को दूसरे का ऐसा शत्रु बना देना चाहिये कि वे परस्पर के खून के प्यासे हो जायं। जब यह अवस्था होगी तो दूसरे से लड़ने वास्ते सभी अपना अपना वल वढ़ावेगे। वही बल जव खूव अच्छी तरह बढ़ जायेगा तब हम ऐसा उपाय करेगे कि हम सव पुनः

एक हो जांय, और उस समय का हमारा वही ऐक्य इस देश को स्वतन्त्र होने की शक्ति प्रदान करेगा।

युवक०। (हिचकिचाता हुआ) पर यह तो बड़ा खतरनाक रास्ता है! इससे अशान्ति मार-काट और खून-खराबा होगा?

योगी०। अवश्य होगा, पर केवल आरंभ में और उससे डरना नहीं होगा। क्या तुम नही जानते कि ज्यादा नही सिर्फ दो सौ वर्ष पहिले इस देश में जितना बल था उसका शतांश भी आज नही है, और इसका कारण क्या है? सोचोगे तो स्पष्ट देखोगे कि वे समय अशान्ति मारकाट और खून-खरावे के थे और आज शान्ति ने हमारी कमर तोड़ दी हैं।

युवकगण०। (रुकते रुकते) शायद यह ठोक है—पर इसमें बहुमूल्य जानें जायंगी!

योगी०। जायंगी, अवश्य जायंगी, पर क्या कोई भी ऐसा काम है जो बिना बलिदान के हो सका है? मां काली के गले में मुंडो की माला पहिनाए बिना क्या सफलता का वर कभी किसी को मिला है? कदापि नही! कुछ दिये बिना कुछ पाना असम्भव है। हाँ यदि तुम लोग डरते हो, यदि खून देख कर तुम्हारा कलेजा कांपता हो, यदि लाशें देख कर तुम्हारी आँखें बन्द हो जाती हों, तो फिर यह मार्ग तुम्हारे बस का नहीं। यह मार्ग कड़े कलेजे वालो के लिये है, भीरु कापुरुषों के लिये नही।

दोनों युवा०। (कटार उठा कर) किसी भीरु कापुरुष को आप हमारे दल में कभी न देखेंगे! परमात्मा साक्षी है कि

अपने इस पवित्र देश की रक्षा, इसके उत्थान, और इसको मुक्ति के लिये, हम दोनों तो क्या हमारे दल का एक एक युवा अपने रक्त की अन्तिम बूंद तक दे देने को तैयार है! डर और कायरता को तो हम लोग प्रतिज्ञा-पूर्वक अपने से दूर भगा चुके हैं।

योगी०। यदि वास्तव में यही बात है तो फिर कमर कस लो। जो मार्ग मैंने बताया है वह योग-शक्ति द्वारा स्वयं भगवान शिव से मुझे प्राप्त हुआ है और एक दम निःसंदिग्ध है। यदि वैसा करोगे तो अवश्य सफलता मिलेगी इसमें कोई सन्देह नही।

दोनों०। (कुछ देर सोचने के बाद) गुरुदेव, आपकी आज्ञा शिरोधार्य है। हम दोनों ने आपके आदेशानुसार चलने की प्रतिज्ञा की हुई है और आज तक आप ही के आदेश की प्रतीक्षा करते भी रहे हैं। यदि वह आदेश यही है तो फल की ओर ध्यान न दे हम उसी पर चलने को तैयार हैं। आज से आपका बताया पथ ग्रहण करते हैं, फिर जो होगा देखा जायगा।

योगी०। हाँ ऐसा ही करो, भूत-भावन की प्रेरणा से सफलता मिलेगी और अवश्य मिलेगी इसमे सन्देह नही। अच्छा अब तुम लोग जाओ, मुझे अभी नित्य-कर्म से छुट्टी पाना है।

दोनों युवको ने योगी को दंडवत की और तब चुपचाप मन्दिर के बाहर निकल गये।

इनके जाने के कुछ देर बाद तक योगी अपने आसन पर स्थिर बैठा कछ सोचता रहा। लगभग एक घड़ी बाद वह उठा।

मन्दिर के द्वार पर आ उसने बाहर की ओर देखा। घोर जंगल मे एक दम सन्नाटा था, कही कोई दिखाई नहीं पड़ता था और न कही से किसी तरह की आहट ही आती थी। यह देख उसने एक लम्बी साँस खींची और तब दोनों हाथ ऊँचे कर एक अंगड़ाई लेता हुआ बोला, "तीर तो निशाने पर बैठा!!"

जोर से हँस कर योगी ने अपना एक हाथ सिर के पीछे किया, साथ ही वह बनावटी लम्बी दाढ़ी चेहरे से अलग हो कर गिर गई, कुछ सायत बाद सिर की जटाएँ भी अलग हो गईं, और तब एक चालीस बयालीस वर्ष के अधेड़ मुसलमान की सूरत निकल आई जिसकी आँखों में दगा और फरेब चमक रहा था।

बनावटी योगी ने अपने कपडों में से एक शीशा निकाल अपना मुंह देखा और तब जोर से हंस कर कहा—""खूब! इन दोनों बेवकूफों के जरिए मैं इस मुल्क भर मे वह आग लगा दूंगा कि बड़े बड़े लीडरों के होश पैतरे हो जायँगे! अगर मेरी किस्मत ने मेरा साथ दिया तो मैं जरूर मुंहमांगा इनाम पाऊँगा। साहब कलक्टर बहादुर को ऐसा वफादार कोई भी नौकर न मिला होगा। अच्छा अब चलूं और उनको अपनी कामयाबी का हाल सुनाऊं!"

इतना कह वह पुनः हसा और तब उस नकली दाढी मोंछ को उठा अपने कपडों में छिपाता तथा एक लात मार कर उस घी

के दीपक को मूर्ति के ऊपर गिराता हुआ मन्दिर के बाहर कनिल गया।

(२)

पहाड़ी बहुत ऊंची तो नहीं है परन्तु उसके तीन तरफ दल-दल और चौथी तरफ गहरी झील होने के कारण उस तक पहुं-चना मुश्किल है क्योंकि इस दलदल और झील ने कुछ इस तरह पर इसको घेर रक्खा है कि अचानक इसके ऊपर पहुँच जाना तो दूर इसकी तरहटी मे भी पहुँचना बहुत कठिन है। उस पर चारो तरफ दूर दूर भयानक और घने जंगल होने के कारण यह स्थान कुछ ऐसा छिपा हुआ भी है कि किसी साधारण व्यक्ति का यहाँ तक पहुंचना करीब करीब असम्भव ही है।

एक बहुत ही पतली और पेचोली पगडण्डी जंगल मे से होती और उस दलदल को पार करती हुई उस पहाड़ी पर जाने की अकेली राह है। इसके सिवाय और किसी तरह यहाँ नही पहुँचा जा सकता, पर यह पगडंडी भी घास फूस में कुछ इस तरह दबी हुई है कि कोई अनजान आदमी इसका लाभ नहीं उठा सकता, फिर भी आइए हम आप इसी की राह यहाँ तक पहुंचे और देखे कि इस पहाड़ी के ऊपर इस समय क्या हो रहा है।

पगडंडी की मदद से जंगल और दलदल को पार कर जब हम पहाड़ी की लगभग आधी ऊँचाई चढ़ जाते हैं तो एक मोड़

लेकर पगडंडी अचानक समाप्त हो जाती है और चारो तरफ छोटी बड़ी अंधेरी और भयानक बहुतेरी गुफाएँ दिखाई पड़ने लगती हैं जिनमें से अधिकांश का मुँह कटीली लताओं और जङ्गली झाड़ियों से ढका हुआ है। इन्हीं में से एक गुफा के अन्दर इस समय हम घुसते हैं। यह और सब गुफाओं से अधिक अंधेरी है और इसका मुँह भी बहुतों से छोटा है फिर भी यह गहरी बहुत है और पहाड़ी के अन्दर काफी दूर तक चली गई है। यकायक घुसते डर मालूम होगा और किसी जङ्गली जानवर की मांद होवे का भय लगेगा पर आप बेखौफ हमारे पीछे पीछे चले आइए। लगभग डेढ़ सौ कदम तक अंधेरे मे जाने बाद गुफा बाईं तरफ मुड़ती है और यहाँ अचानक ही खतम हो जाती है और तब सामने ही कुछ निचाई पर एक छोटा सा मैदान दिखाई पड़ता है जो तीन चार बिगहे से अधिक का न होगा। इसके चारो तरफ पहाड़ी दीवारे हैं जिनके ऊपर से आता हुआ आस्मान का चाँदना बताता है कि यह मैदान इस पहाड़ी के कलेजे के अन्दर बना हुआ है, साथ ही यह भी पता लगता है कि उस गुफा के सिवाय और किसी राह से यहाँ तक पहुँच पाना बहुत ही कठिन है।

इस समय इस मैदान के बीचोबीच में हम लगभग सौ डेढ़ सौ आदमियों की एक छोटी भीड़ को देख रहे हैं जो सभी लाल कपड़े पहिने और लाल ही कपड़ों से अपने मुँह भी छिपाये हुए उस छोटे चबूतरे को घेर कर बैठे हैं जो इसके बीचोबीच में बना हुआ है। आइये हमलोग भी यहीं आ जांय और एक तरफ

छिप कर देखे कि इन लोगों का क्या इरादा है या ये क्या करने के लिये यहाँ इकट्ठे हुए हैं।

चबूतरे के ऊपर एक टेबुल है जिस पर लाल कपड़ा बिछा हुआ है। टेबुल के बीचोबीच आदमी की खोपड़ी की हड्डी का एक समूचा ढाँचा रक्खा हुआ है जिसके दोनों तरफ दो चमकते हुए खांडे पडे हैं और पीछे की तरफ एक महिष का ताजा कटा हुआ सिर जिसमें से अभी तक कभी कभी खून टपक जाता है। टेबुल के पीछे तोन कुरसियाँ लाल कपड़े से मढ़ी रक्खी है और उन पर तीन आदमो वैठे हैं जिनके बदन का हर एक हिस्सा, चेहरा, हाथ पैर, यहाँ तक कि उगलियाँ भी, लाल कपड़े से ढको हुई है। चबूतरे के चारो तरफ को भीड़ का ध्यान इन्ही तानों आदमियो को तरफ है।

बोच वाले आदमो के सामने एक घन्टी है जिसे वह थोड़ी थोड़ी देर पर बजा देता है। घन्टो को तोसरी आवाज होते ही उसके बाएँ तरफ वाला आदमी खड़ा हो गया और चारो तरफ की भीड़ मे और भी घोर सन्नाटा छा गया। इस आदमी ने कुछ देर तक तो हाथ जोड़ कुछ ध्यान किया और तव अपना दाहिना हाथ उस नर-कपाल और बांया भैसे के सिर पर रख धीमे स्वर में कुछ कहा, इसके बाद तेज आवाज में इस तरह बोलना शुरू किया :—

"भाइयो, आज हमलोग किस लिये इकट्ठे हुए है यह बताना न होगा। आज वे कठिन प्रतिज्ञाएं हमें करनी हैं जिनको आधार

बना कर उस भयानक काम का आरम्भ होगा जिसे पूरा करने के लिये अपनी जान को हाथ में ले हम लोग तैयार हुए है। कहना नहीं होगा कि वह प्रतिज्ञाएं कर लेने के बाद ही हम लोग इस योग्य होंगे कि 'रक्त-मंडल' के सदस्य बन सकें। क्या आप लोग वे प्रतिज्ञायें करने को तैयार हैं?"

डेढ़ सौ गलों से घोर स्वर निकला—"हाँ तैयार हैं!" वह आदमी फिर कहने लगा :—

"मैं एक एक करके उन प्रतिज्ञाओं को कहता जाता हूँ, मेरे साथ साथ आप लोग भी कहें। इसके बाद एक हाथ इस नर-कपाल और दूसरा इस रक्त-रंजित महिष-मुन्ड पर रख कर हर एक को वही प्रतिज्ञा करनी होगी। सुनिये, पहिली प्रतिज्ञा है:—

"मै आज से अपने धर्म और अपनी जाति को अपने देश के ऊपर न्योछावर करता हूं।"

सभों ने ऊंचे स्वर में यह प्रतिज्ञा दुहराई, वह मनुष्य पुनः बोला :—

"आज से मैने दया और करुणा का आश्रय छोड़ा, बाप बेटे भाई बहिन आदि का रिश्ता छोड़ा, मित्रता छोड़ी, प्रेम छोड़ा विचार छोड़ा। आज से मेरा अपना कोई भी नहीं यहाँ तक कि मेरा निज का कोई विचार तक भी नही।"

सभों ने इसे भी दुहराया। वह मनुष्य तीसरी प्रतिज्ञा कहने लगा :—

"आज से मेरी जान माल आत्मा और विचारों का मालिक

'रक्त-मंडल' हुआ। उसकी प्रत्येक आज्ञा मैं पूर्ण करूंगा। अगर वह मुझसे मेरे पिता या पुत्र की भी हत्या करने को कहेगा तो बिना हिचके करूंगा और अगर न कर सकूं तो स्वयम् अपनी जान दे दूंगा।"

बिना हिचकिचाहट के उपस्थित मनुष्यों ने यह प्रतिज्ञा भी की। उस व्यक्ति ने अब चौथी प्रतिज्ञा कही:—

"अपने चित्त से दया का भाव दूर करने के निमित्त आज से तीन दिन के अन्दर मै अपने हाथों एक पशु का वध करूंगा, और अपनी इस पराधीन मातृभूमि का दुःख दूर करने के योग्य मजबूत कलेजा करने के लिए तीन सप्ताह के अन्दर एक आत-तायी का वध करूंगा।"

यह प्रतिज्ञा भी उत्साह के साथ दुहराई गई और तब वह आदमी बोला—"भाइयो, अब मैं पाँचवीं और अन्तिम प्रतिज्ञा कहता हू जिसकी आवश्यकता समय को देखते हुए पड़ गई है। आप लोग कहे—"मैं शपथपूर्वक कहता हूँ कि आज से ऐसी चेष्टा करूंगा जिससे इस प्राचीन राज्य पर धोखेबाजी से जो दुष्ट जाति कब्जा कर बैठी है उसके प्रति जनता का असन्तोष बढ़े, जनता में बल उत्पन्न हो, और देश भर की सब जातियों की प्रजा में परस्पर प्रेम तथा सौहार्द्र ,......"

कहना समाप्त नही हुआ था कि एक तरफ से जोर से आवाज आई—"ठहरो! ठहरो!!" बोलने वाला रुक कर उधर ही देखने लगा जिधर से आवाज आई थी। दो मनुष्य गुफा से

बाहर निकल कर तेजी के साथ लपकते हुए इधर ही को आ रहे थे। सब लोग उन्हीं की तरफ देखने लगे। उपस्थित सब आदमियों क तरह इन दोनों का भी तमाम वदन लाल कपड़ों से ढका हुआ था। बात की बात में ये दोनों उस जगह आ पहुंचे और भीड़ को चीरते हुए बीच वाले चौतरे के पास जा पहुंचे। यहाँ पहुंच एक आदमी तो रुक गया परन्तु दूसरा चौतरे पर चढ़ गया और किसी तरह का गुप्त इशारा करने बाद नर-कपाल और रक्त-मंडित मुंड पर हाथ रख उसने धीमे स्वर में कुछ कहा। इसके बाद घूम कर वह बोला, "भाइयो, मैंने आप लोगों को अन्तिम और पाँचवी प्रतिज्ञा करने से रोक दिया, इसका कुछ विशेष कारण है। यदि आप लोग आज्ञा दें तो मै अपने इन साथियों से कुछ सलाह कर लूं।"

इतना कह वह आदमी उन तीनों आदमियों की तरफ झुका। बहुत ही धीरे से उसने उनसे कोई ऐसी बात कही कि वे तीनों ही चौंक कर खड़े हो गये तथा सभों का हाथ अपनी अपनी कमर पर चला गया जिसके साथ एक-एक भुजाली लटक रही थी। परन्तु इस आगंतुक की आगे वाली बातों ने उन्हें शान्त किया और तब उनमें कुछ सलाह होने लगी। चारो तरफ की भीड़ उत्सुकता के साथ इनकी ओर देख रही थी।

आधी घड़ी के बाद उसी व्यक्ति ने जिसने प्रतिज्ञाएं कही थीं उठ कर कहा, "भाइयो, कई कारण आ पडे हैं जिससे यह पांचवीं

और अन्तिम प्रतिज्ञा कराने की अभी इस समय आवश्यकता नही समझी जाती । आप लोग उन्ही चारो प्रतिज्ञाओं का पालन करे। अब एक एक आदमी उठ कर यहां आये और इस नरमुन्ड तथा रक्त-सिंचित महिष-मुन्ड को स्पर्श कर प्रतिज्ञा-पूर्वक 'रक्त-मंडल' का सदस्य बन जाय।"

एक एक करके सब लोग आगे बढ़ने और उन दोनो डरावनी चीजों को छू छू और प्रतिज्ञा कर कर पीछे लौटने लगे। जब सभों ने प्रतिज्ञा पूरी कर ली तो वही आदमी पुनः बोला, "म लोग अब शपथ-पूर्वक 'रक्त-मडल' के सदस्य बन गये और अब आगे का काम होना चाहिये। पर इस समय हम चारो व्यक्ति आपसे दो घड़ी का अवसर एक ऐसे विषय पर विचार करने के लिए मांगते हैं जो बड़ा ही गभीर है और जिसका पता अभी अभी हम लोगों को लगा है। आप लाग तब तक यहां ही रहें।"

इतना कह वह आदमी चबूतरे पर से उतरा और उसके पीछे पीछे उसके दोनों साथी तथा यह नवीन आया हुआ व्यक्ति भी उतर आया। ये चारो उस मैदान को पार कर एक गुफा के मुहाने पर पहुंचे और उसके अन्दर घुस गये।

(३)

एक से दूसरी, दूसरी से तीसरी, इस प्रकार कई भयानक और अँधेरी गुफाओं में से होते हुए वे चारो अन्त में एक ऐसे

स्थान पर पहुंचे जहाँ पहाड़ी यकायक समाप्त हो जाती थी और बहुत नीचे किसी झील का काला पानी लहराता हुआ दिखाई पड़ता था। यह स्थान एक चौड़ी और ऊंची गुफा थी जो सामने की तरफ से तो खुली थी पर पीछे वाले रास्ते के अलावे बाकी सब तरफ से बन्द। इसमें जगह जगह सुरंग की तरह के और भी रास्ते दिख रहे थे पर वे किधर जाते हैं इसके बारे में कुछ कहना कठिन है।

इस गुफा में छोटी दरी बिछी हुई थी जिसके बीचोबीच में एक छोटी चौकी पर वैसा ही एक नर-कपाल तथा दोनों तरफ दो तेज भुजालियाँ पड़ी हुई थीं, अन्तर यही था कि इसके पीछे भैंसे का सिर रक्खा न था। ये चारो आदमी इसी चौकी के चारो तरफ बैठ गये और आपस में बातें करने लगे। एक आदमी बोला—

"यह मंडल की अन्तरंग सभा है इस लिये हम लोगों को एक दूसरे से अपनी सूरत या नाम छिपाने की आवश्यकता नहीं, अतः सब से पहिले हमें यह पौशाक उतार देनी चाहिये।"

इतना कह उसने अपनी नकाब और लाल पौशाक उतार कर अलग कर दी और उसकी देखा देखी बाकी तीनों ने भी ऐसा ही किया। अब इन चारो की सूरतें साफ दिखाई पड़ने लगी परन्तु इस समय इनके नखसिख का वर्णन करने का मौका न होने के कारण हम वह सब न बयान कर मुख्य विषय पर ही रहते है।

उस आदमी ने पुनः कहा—"सलाह शुरू करने के पहिले मैं यह बात दुहरा दिया चाहता हूं कि हम लोग आज वास्तव में यहाँ क्यों इकट्ठे हुए हैं। हमारा देश आज दो सौ वर्षों से गुलाम हो रहा है। यहाँ के सब असली राजा मुर्दा हो गये हैं और उनके स्थान पर धोखे और दगाबाजी से एक विदेशी जाति शासक बन बैठी है। अत्याचारी विदेशियों के स्वेच्छाचारी शासन से यहाँ की प्रजा अब एक दम घबरा उठी है और चाहे जैसे भी हो इस विधर्मी शासन का अन्त करने और भागे हुए प्राचीन असली राजाओं को पुनः उनके सिंहासनों पर ला विठाने के लिये चारो ओर से प्रयत्न हो रहा है। तरह तरह के लोग तरह तरह की आशाओं के साथ तरह तरह की चेष्टाएं कर रहे हैं और उनमे से कुछ को थोडी बहुत सफलता भी जरूर मिल रही है, पर इन सभों के इलावे यहाँ इस समय एक और दल भी है जिसका विश्वास है कि बिना क्रान्ति विद्रोह और खूनखराबे के इस देश की पराधीनता कभी दूर न होगी। ऐसे लोगों की निगाह में स्वतन्त्रता और स्वराज्य का मार्ग नरमुन्डों पर से होकर ही जाता है। ऐसे लोगों को हमारे वर्तमान शासक 'बलवाई' कहते है यद्यपि वास्तव मे ये ही सब से अधिक देशभक्त हैं क्योंकि इन्होने अपने विश्वास के ऊपर अपनी सब से प्यारी चीज 'प्राण' को न्योछावर कर दिया है। खैर जो कुछ भी हो, इन बलवाइयों का फैलाव यों तो देश भर में है पर मुख्य रूप से हमारे सरहदी जिलों में इनका आज अधिक जोर है।

"इधर कितने ही बरसों से ये क्रान्तिकारी अपना काम कर रहे हैं। कितने ही देश को बलिवेदी पर चढ़ गये, कितनों ही के वंश तक लोप हो गये, कितनों ही को जीवन्मृत होना पडा, पर काम बन्द नही हुआ और इनका जोर भी बढ़ता ही गया। पर अब देखा जाता है कि बिना इन सभों का एक संगठन किये और एक बलवान मुख्य संस्था बनाये काम ठीक तरह से नहीं चल सकता क्योंकि टुकड़े टुकड़े में काम होने के कारण सफलता नहीं मिल रही है और पापी शासन को भी दमन करने और ऐसे लोगों को पीस डालने में कष्ट नहीं होता है। यही विचार कर इधर कुछ समय से सभी क्रान्तिकारियों को एकत्र कर के एक साथ मिला देने की चेष्टा हो रही है। काफी बातचीत और बहुत उद्योग के बाद हम चार आदमी आज एक हफ्ते से इस जगह इकट्ठे हैं। मैं गुरुवक्शसिंह पश्चिम की गदर पार्टी का मुखिया हूँ। ये अल्लादीन इस देश की दक्षिणी सीमा की उस मशहूर पार्टी के मुख्य कार्यकर्ता है जिसने शासकों की नाक में दम कर दिया है। ये रासबिहारी मशहूर बम-गैन्ग के सर्वेसर्वा हैं, और ये रघुनाथसिंह उत्तर के क्रातिकारियों के सरगना हैं। हम चारो ने घन्टों विचार करने के बाद यह स्थिर किया है कि हम लोग 'रक्त-मंडल' के नाम की एक संस्था बना कर अपने अपने विभिन्न दलों को उसी में मिला दें और अब आगे से इस एक ही केन्द्र और एक ही रक्त-मंडल

नाम के अाधीन सब के कामों का संचालन हो। इसके लिये नियम बनाये गये, रक्त-मंडल' नामक एक मंडल स्थापित किया गया, और पाँच प्रतिज्ञाएं स्थिर की गई जिनको लेने वाले ही इस 'रक्त-मंडल' के सदस्य हो सकेगे। हम लोगों ने अपने अपने दल के लोगों को यहाँ बुलाया और जो कुछ हमारे सहकारी यहाँ इकट्ठे हो सके उन्होने अभी अभी उनमें से चार प्रतिज्ञाएं कर ली हैं पर पाँचवीं शपथ करने के पहले हमारे इन साथी रघुनाथसिह ने उन्हें रोक दिया है।

"अब विचारणीय विषय यह हो उठा है कि इन रघुनाथ-सिंह ने वह पाँचवीं प्रतिज्ञा क्यों रोकी और वह प्रतिज्ञा कराई जाय या नही ? इसी प्रश्न पर विचार और आगे के लिये कार्य-क्रम स्थिर करने के लिए ही हम लोग अन्य सभी काम रोक कर यहाँ आ गए है।"

इतना कह कर गुरुबक्शसिह ने बाकी के तीनों आदमियों की तरफ देखा जिन्होने सिर हिलाया मानों उनकी बात स्वीकार को। थोड़ी देर के लिए सन्नाटा हो गया और तब रघुनाथसिह कहने लगे :—

"पांचवीं प्रतिज्ञा यह कहती है कि 'इस राज्य भर की भिन्न भिन्न जातियों मे प्रेम-भाव बढ़ाने की चेष्टा करना मेरा उद्देश्य होगा' परंतु मैंने वह प्रतिज्ञा करने से रोक दिया कारण एक ऐसे व्यक्ति ने जिसे मैं केवल गुरुतुल्य ही नही देवतातुल्य यागी

और संस्कारक समझता हूं मुझे विश्वास दिलाया है कि इस समय इस देश के निवासियों में शक्ति बढ़ाने के लिए यहाँ की सब जातियों में परस्पर द्वेष बढ़ाने की आवश्यकता है प्रेम बढ़ाने की नही। संक्षेप में मैं उनके बताए हुए सब कारण बताता हूं, आप लोग सुने और तब जैसा मुनासिब समझें निर्णय करें।"

रघुनाथसिंह आगे कुछ कहा ही चाहते थे कि यकायक दीवार के साथ टंगे हुए एक टेलीफोन की घन्टी जोर से बज उठी। घन्टी की आवाज सुन न जाने क्यों वे सब के सब चौंक पड़े और एक दूसरे की ओर देखने लगे। जल्दी से उठ कर रघुनाथसिंह ने टेलीफोन का चोंगा कान में लगाया और सुनने लगे।

न जाने किसने क्या बात कही कि रघुनाथसिंह एकदम चिहुंक पडे। उनका चेहरा पीला पड़ गया और टेलीफोन वाला हाथ एक क्षण के लिए काँप गया, मगर तुरत ही उन्होंने अपने को सम्हाला और तब बाकी तीनों आदमियों की तरफ देख कर बोले, "महावीरसिंह टेलीफोन कर रहे हैं और उन्होंने एक ऐसी भयानक खबर दी है जिसे अपने मुंह से निकालते भी मैं डरता हूँ।"

सब लोग घबरा कर उनका मुँह देखने लगे। थोड़ी देर तक सन्नाटा रहा और इसके बाद रघुनाथ ने काँपती हुई आवाज में कहा, "महाबीरसिंह का कहना है कि हम चारो में से कोई एक

आदमी नकली है यानी जो नाम वह अपना बता रहा है वह शख्स नही है और बाकी तीनो को धोखा देकर हममें आ मिला है। महावीर को सन्देह है कि यह आदमी हमारे शासको का बड़ा ही चालाक जासूस रघुवीरसिह है जिसने हम लोगो के बहुत से भेद जान लिये हैं और बचीखुची बातों को भी जान कर अन्त मे जरूर हमें सब साथियो समेत गिरफ्तार करा देगा!!"

यह भयानक बात सुनते ही उपस्थित सब आदमियो के चेहरे पीले पड़ गये और सभी ने एक दूसरे की तरफ सन्देह की निगाह डाली। हर एक को अपने साथी के रघुवीरसिह होने का डर पैदा हो गया। कुछ देर के लिए इन चारो बहादुरो की यह हालत हो गई कि काटो तो बदन से लहू न निकले।

टेलीफोन के पास खड़े रघुनाथ ने कहा, "इस अवसर के पहिले हम लोगों को आज तक कभी भी एक जगह इकट्ठे होने का मौका नही मिला था इसी से अब तक कोई भी एक दूसरे की असली सूरत से वाकिफ न हो सका, ऐसी हालत में हम चारो मे से कौन वह बेईमान रघुवीरसिह है इसका बताना सहज नहीं। सम्भव है कि मै खुद वही होऊ, या मेरे दोस्त गुरुबक्शसिह वह जासूस हो, अल्लादीन भी वे गोइन्दे हो सकते हैं, और रास-बिहारी का भी भेदिया होना सम्भव है। मगर खैर, चाहे हममें से कोई भी जासूस हो, पर यह निश्चय है कि उसने हमारे अन-गिनती भेद जान लिये और अब उसका इस जगह से जीते जी

निकल जाना हम बाकी तीनों के हक में ही नहीं हमारे उद्देश्यों और हमारी आज ही खडी की गई संस्था 'रक्त-मंडल' के लिये भी बहुत ही बुरा होगा।"

चारो क्रान्तिकारी एक दूसरे की तरफ देखने लगे। इस समय हर एक के चेहरे से भय और सन्देह प्रकट हो रहा था। हममे से न जाने कौन वह रघुबीरसिंह है ! न जाने किसके हाथ में बाकी के तीनों आदमियों की जानें हैं ! गुफा में ऐसा घोर सन्नाटा छा गया कि सुई गिरने की आवाज भी सुनी जा सकती थी।

यकायक फिर टेलीफोन की घंटी बजी। सब लोग इस तरह चौक पड़े मानो टेलीफोन नहीं बन्दूक छूटने की आवाज उनके कानों में गई हो। रघुनाथसिंह ने चोंगा कान मे लगा कर सुनना शुरू किया और अपने दूसरे हाथ के इशारे से इन लोगो को शान्त रहने को कहा।

कुछ देर के बाद रघुनाथ ने चोंगा रख दिया और बाकी लोगो के पास आ बैठे। इस समय उनके चेहरे पर एक विचित्र सा भाव था। सब लोग बेचैनी के साथ उनका मुँह देखने लगे। उन्होने सभों की तरफ देखते हुए धीरे धीरे कहा, "महाबीरसिंह ने कहा है कि मैं पांच मिनट में बता दूंगा कि रघुबीरसिंह जासूस किसका नाम धर के यहाँ आया है।"

इस बात ने उन लोगों पर बम के गोले का सा काम किया। सभी चौक उठे और सभी के हाथ अपनी अपनी जेबों में चले

गये। एक सायत के बाद चारो के हाथों में एक एक पिस्तौल चमकती दिखाई देने लगी।

(४)

चारो क्रान्तिकारी एक दूसरे की ओर सन्देह भरी निगाहें घुमा रहे थे। सभी अपने सिवाय बाकी तीनों ही पर रघुबीरसिंह जासूस होने का शक कर रहे थे। धीरे धीरे उन लोगों की यह अवस्था हो गई कि चुप रहने में भी परिश्रम मालूम होने लगा और अन्त में रघुनाथसिंह ने एक लम्बी सांस लेकर कहा, "ओफ. अब तो यह सन्देह जान ले रहा है! पांच मिनट से तो कहीं अधिक हो गया, महाबीर ने कुछ बताया नहीं क्यों?"

मानो इस बात के जवाब में ही घंटी पुनः बज उठी। रघुनाथ ने दौड़ कर चोंगा कान से लगाया और सुनने लगा, महाबीर की आवाज थी—"मुझे पता लग गया—रघुबीरसिंह जासूस जिसकी सूरत बन कर आया है उसका नाम है......!" पर यकायक आवाज टूट गई। ऐसा मालूम हुआ मानों इसी समय टेलीफोन का तार बीच में कहीं से काट दिया गया हो।

बाकी के तीनों आदमी एकटक रघुनाथ की सूरत देख रहे थे। यकायक उसके माथे पर पसीना आता हुआ देख तीनों चौंक कर बोल उठे, "क्यों, क्यों, क्या मामला है?" रघुनाथ ने चोंगा हाथ से पटक दिया और माथे पर हाथ फेरते फेरते इधर आकर अपनी जगह बैठ गया, तब उसने कहा, "महाबीर उस

जासूस का परिचय बता ही रहा था कि किसी ने टेलीफोन की तार काट दी !"

सभों के सिर पर मानो बिजली सी गिर पड़ी। सभी किंकर्तव्य विमूढ़ से हो एक दूसरे को ओर देखने लगे। रासबिहारी ने अपने लम्बे लम्बे बालों को उंगलियों से सुलझाते हुए कहा, "तो क्यों न हम लोग खुद ही चल कर महाबीर से दरियाफ्त कर लें कि हममें से कौन वह नालायक रघुबीर जासूस है ?"

रघुनाथ यह सुन बोला, "नहीं, मैं ऐसा करना पसन्द नहीं करता। इस समय हम चारो में से एक तरह पर सभी वह रघुबीर हो सकते हैं अस्तु यहाँ से हटने में सम्भव है कि उस रघुबीर को भागने का मौका मिल जाय। जितने भेद वह जान चुका है उतने ही हमें और हमारे साथियों को फांसी पर चढ़ा देने के लिए काफी हैं। हम लोगों की जान तभी बच सकती है जब रघुबीर हममें से अलग छाँट दिया जाय और उसका सिर भी इसी नर-कपाल के बगल में रक्खा दिखाई देने लगे। मैं समझता हूं कि महाबीर खुद ही इस तरफ आ रहा होगा।"

रासबिहारी यह सुन बोल उठा, "तब फिर चुपचाप बैठो और महाबीरसिंह के आने की राह देखो।"

(५)

एक एक मिनट पहाड़ की तरह भारी मालूम होने लगा।

चारो विद्रोहियो के कलेजे उछल रहे थे और बदन से पसीना छूटने लगा था। आज तक ऐसी समस्या मे वे कभी नही पड़े थे। बड़े से बड़े भयानक काम कर गुजरने पर भी जिनकी छाती हिली न थी वे ही आज यह समाचार सुन कर कि 'उनके बीच मे दुश्मन का एक जासूस आ घुसा है' काँप उठे थे। क्यों? इसी लिए कि यहाँ पर सन्देह पैदा हो गया था। उस आपदा से भयानक आपदा कोई नही है जिसमें सन्देह की भीषणता मिली हुई हो, उस मुसीबत से बड़ी मुसीबत कोई नही है जिसके बारे में कोई यह न जानता हो कि वह कब और किस पर आ गिरेगी।

यकायक बाहरी गुफा में किसी के पैरों की चाप सुनाई पड़ी। सुनते ही सब के सब चौंक पड़े। एक साथ सभी के मुँह से निकल पड़ा—"महावीर!" और सब के सब हड़बडा कर खड़े हो गये। अब पता लग जायगा कि यहाँ वाले चारो आदमियों में से कौन सा नकली है। अब मालूम हो जायगा कि कौन वह जासूस रघुवीर है। इसी समय उन चारों में एक की किस्मत का फैसला हो जायगा। चमकती पिस्तौलें चार हाथो में दिखाई पड़ रही थी, आठ खूंखार आँखें चमक रही थी।

पैरों की आहट नजदीक होने लगी। ज्यों ज्यों आने वाला पास होता जाता था यहाँ खडे आदमियों के कलेजे भी त्यों ही त्यो ऊंचे उछलते जा रहे थे। आखिर वह आदमी पास आ ही पहुंचा गुफा के मुहाने पर किसी की छाया दिखाई पडी और

दूसरे क्षण लाल ही कपड़े से अपना तमाम बदन यहाँ तक कि चेहरा भी छिपाये एक आदमी वहाँ आ मौजूद हुआ जिसके हाथ में लाल ही कपड़े में बंधी एक गठरी थी। चेहरा छिपा रहने के कारण आगंतुक को पहिचानना असम्भव था परन्तु सब को विश्वास था कि यह महाबीर ही होगा अस्तु उसके आते ही रघुनाथ ने आगे बढ कर कहा, "महाबीर, वारे तुम आ गये! हम लोग बडी बेचैनी से तुम्हारी राह देख रहे हैं। आओ आगे बढो और बताओ कि हममें से कौन वह पापी रघुबीरसिंह है जिसके खून की प्यासी इस गुफा की जमीन हो रही है?"

मगर आगन्तुक ने जवाब न देकर सिर हिलाया, मानों अपनी लाचारी प्रगट की। रघुनाथसिंह यह देख कर कुछ कहा ही चाहते थे कि उसने हाथ के इशारे से उन्हें रोका और धीरे धीरे कहा, "मुझे बडे अफसोस के साथ कहना पड़ता है कि किसी ने महावीरसिंह का खून कर दिया।"

"हैं, महावीरसिंह का खून कर दिया!" तीन गलों से यह आवाज एक साथ निकली। केवल एक आदमी चुप रहा, मगर कौन? यह बताना कठिन है, कारण वही जासूस रघुबीरसिंह था और जानता था कि किसने क्यों महाबीर का खून किया है। उसके मन की वह बेचैनी और घबराहट जिसे वह अभी तक बड़ी कोशिश से छिपा रहा था अब कुछ कम हो गई और उसने एक बेमालूम मगर लम्बी साँस खींची। लेकिन बाकी के तीनों आदमियों की बेचैनी और घबराहट का कोई ठिकाना न

रहा क्योंकि महावीर के मर जाने से 'रक्त-मंडल' का एक मुख्य सदस्य और चलतापुर्जा बहादुर ही नहीं जाता रहा बल्कि इस समय जासूस को पहिचानने का जो एक मात्र साधन था वह भी मिट गया।

रघुनाथ ने बेचैन होकर कहा, "किसने महावीर को मारा क्या तुम जानते हो?"

आगन्तुक ने कहा, "हाँ, और उसका सिर इस गठरी में मौजूद है।"

कह कर उसने गठरी खोल दी, जिसके साथ ही खून से रंगा बालों से ढका हुआ एक नर-मुन्ड निकल कर लुढ़क गया जिसका पहिचानना इस समय कठिन था। इस आदमी नें घृणा के साथ उस नर-मुन्ड की ओर देखा और तब कहा, "वह पापी मेरे हाथों मारा गया और मेरी ही गोद में महावीर ने अपनी अन्तिम साँस ली, पर मरने के पहिले वे मुझे एक भेद बता गये।"

"वह क्या?"

"वे उस असली आदमी का कुछ हुलिया मुझे बता गये जिसकी सूरत बन जासूस रघुवीरसिंह इस समय यहाँ आया हुआ है।"

यह कहने के साथ ही बोलने वाले ने उछल कर रासविहारी के दोनों हाथ अचानक इस फुर्ती से पकड़ लिये कि वह हिलने की भी मोहलत न पा सका, और तब उद्वेग से काँपते हुए स्वर में उससे बोला, "तुम—तुम रासबिहारी—तुम हो वह जासूस हो!!"

ताज्जुब के मारे रासबिहारी के मुँह से एक टूटी फूटी आवाज निकली, "मैं ! मैं जासूस !!"

आगन्तुक ने कहा, "हाँ, तुम ही वह जासूस हो, और मैं अभी इसको साबित कर दूँगा। (घूम कर गुरुबक्शसिंह से) जरा आप जाइये और उधर वाली गुफा में पानी का जो बरतन पड़ा है उसे उठा लाइए, अभी इस कम्बख्त जासूस की कलई खुली जाती है !!"

गुरुबक्शसिंह जिनसे यह बात कही गई थी तुरत उठ खड़े हुए और दौड़ते हुए एक तरफ को चले गये और इधर अल्लादीन और रघुनाथ ने रासबिहारी के दोनों हाथ और मजबूती से पीठ पीछे पकड़ लिए जिसका चेहरा अचानक पीला पड़ गया था और वदन इस तरह काँप रहा था मानों जड़ैया बुखार चढ़ आया हो।

(६)

संध्या के बढ़ते हुए अंधेरे में एक छोटे टीले के ऊपर हम दो मनुष्यों को खड़ा देखते हैं।

इन दोनों का पूरा शरीर लाल कपड़ों से ढंका हुआ है परन्तु चेहरा खुला है जिससे हम वता सकते हैं कि इनमें से एक तो नवयुवा है और दूसरा एक अधेड़ पर मजबूत और ताकतवर आदमी जिसकी घनी और ऊपर चढ़ी हुई दाढ़ी मोछों ने उसके चेहरे के आधे हिस्से को ढाँक रखने के सिवाय उसे कुछ-कुछ

भयानक सा भी बना रक्खा है। पर इस समय इस अधेड़ व्यक्ति की सूरत से कुछ संकोच तथा लज्जा सी प्रगट हो रही है और यह सिर नीचा किए हुए उस नवयुवा की बातें सुन रहा है जो उसके सामने खडा बड़े रोष के साथ कह रहा है—

"...—पिताजी, बड़े खेद की बात है कि आपको आज मुझ अपने बेटे के ही मुँह से ऐसी बातें सुननी पड़ रही हैं, और धिक्कार है मुझे कि मैं अपने पिता को यह सब सुना रहा हूँ—पर मैं लाचार हूँ कारण अपनी प्रतिज्ञानुसार अब मेरा न कोई मां है और न बाप। अब जो कोई भी मेरा सगा-सम्बन्धी इस संसार में है वह यह मेरी प्यारी जन्म-भूमि ही है। मैं उसी के लिये हूं और उसी का हूँ। और आप? मुझे कहना पड़ता है कि समय ने, लालच ने, झूठी उच्चाकांक्षाओं ने, आपकी आंखें पलट दी हैं। आप नहीं देख रहे हैं कि किस प्रकार एक अर्थ-लोलुप अत्याचारी शासक हमारी इस सम्पन्न भूमि का रक्त-शोषण कर रहा है। आप नही देख रहे हैं कि किस प्रकार भूखे कंगालों के मुँह से रोटियाँ छीन कर अमीरों के पेट में ठूँसी जा रही हैं। आप नही देख रहे हैं कि किस प्रकार निरपराधों के खून से खेत और बाग सींचे जा रहे हैं। आप नहीं देख रहे हैं कि अनाथ बालकों और विधवा युवतियों की क्या दुर्दशा हो रही है, हमारी पवित्र ललनाओं का सतीत्व किस प्रकार नष्ट किया जा रहा है, और इस प्राचीन देश के वीर निवासियों को किस प्रकार नपुंसक बनाया जा रहा है। आप एक अन्यायी जाति

के हाथ की कठपुतली हो गये हैं और अपने ही हाथों से अपने भाइयों के गले काट रहे हैं। पिताजी, पापी अंगरेजों के जासूस बन कर उन मुट्ठी भर जान हथेली पर रख के काम करने वाले बलवाइयों का भेद लेने आने के पहिले आपके मन में क्या जरा देर के लिए भी यह विचार न उठा कि आप कैसा अनर्थ करने जा रहे हैं। पिंजडे में बन्द आपका भाई छूटने के लिए छटपटाता है और आप उसी के हाथ पैरों की जंजीरें और कसते जा रहे हैं। क्या यह विचार आपके मन में कोई असर नहीं करता? क्या अपने ही देश-वासियों को फाँसी पर लटकवाने का ख्याल कर आपको कुछ भी लज्जा नहीं आती?"

नवयुवक अपने भावों के आवेश में पड़ कुछ देर के लिये चुप हो गया मगर अधेड को कुछ कहने के लिए मुँह खोलते देख वह तुरत ही फिर बोल उठा, "पिताजी, आज आपके कारण मैंने एक ऐसा घोर दुष्कर्म किया है जिसका कोई भी प्रायश्चित नहीं हो सकता। आपके कारण आज मुझे एक ऐसे आदमी का खून करना पड़ा है जिसे मैं अपना पूज्य और गुरु जानता था। आप अगर आज गुरुबक्शसिंह बन कर हम लोगों का भेद लेने न आए होते तो मुझे कदापि महावीरसिंह को हत्या न करनी पड़ती। आप ही के वहाँ होने के कारण मैंने महावीरसिंह को मारा और अपने मुखियाओं को धोखा दे झूठा बहाना कर आपके प्राण बचाए। आज अपने एक भाई के खून का

इलजाम मेरी गरदन पर है, भगवान जाने यह पाप किस तरह उतरेगा!"

कहते कहते नवयुवा की आँखें डबडबा आई और गला रुँध गया। उसके गालो पर से होती हुई गर्म आँसुओ की बूँदें जमीन को तर करने लगी। अधेड़ व्यक्ति कुछ देर तक उसकी हालत देखता रहा और तब अन्त मे बोला, "सुनो अमर, तुमने बहुत कुछ लम्बी चौड़ी बाते कह डाली और मै चुपचाप सुनता रहा, सिर्फ इसीलिये कि तुम्हारा यह भारी अहसान मेरी गरदन पर है कि तुमने अभी अभी मुझे एक ऐसी मुसीबत से बचाया है जिससे जीता बचने की आशा मैं छोड़ चुका था, पर अब तुम बहुत बढ़ चढ़ कर बातें करने लगे हो जो अब मुझसे बरदाश्त नही होता। तुमने मुझे लालची, पापी, लोभी, इनामों का भूखा, अंगरेजों का खुशामदी कुत्ता, और न जाने क्या क्या बना डाला है। यद्यपि वास्तव में यह सब बिल्कुल झूठ है पर अपनी बीसों बरस की जासूसगिरी में ऐसी बातें सुनने का आदी हो जाने के कारण मैं इन पर कुछ खयाल नही करता, मगर एक बात जो तुमने नहीं सोची या जिसका कहना तुमने पसन्द नहीं किया वह मै तुम्हे बता दिया चाहता हूँ। तुमको शायद यह सुन ताज्जुब होगा कि मुझसे न तो धन की लालच, न पदवी की इच्छा, और न कलेक्टरों की वाहवाही वह काम करा रही है जिसका तुम मुझ पर ऐब लगा रहे हो। मैं तुम बलवाइयों के पीछे इसलिये नही पड़ा हूँ कि अपने अफसर से इनाम

पाऊँगा, बल्कि एक दूसरे और इसके बिल्कुल उलटे कारण से पड़ा हूँ और सचमुच दिल से चाहता हूँ कि इस देश की हुकूमत के खिलाफ षड़यन्त्र करने वाला एक एक बलवाई फाँसी के तख्ते पर लटक जाय !!"

पुत्र ने पिता की ओर प्रश्न की दृष्टि डाली। अधेड़ ने कहा, "अमर, तुम्हें चाहे विश्वास हो या न हो, पर मैं अस्ताचल-गामी सूर्य भगवान की ओर हाथ उठा कर कहता हूँ कि मेरे हृदय में भी देश-प्रेम की लहरें उतने ही जोर की उठा करती हैं जितनी तुम्हारे हृदय में, मेरी नसों में भी उतना ही गर्म खून दौड़ा करता है जितना तुम्हारी नसों में, मैं भी इस देश के हित का उतना ही आकांक्षी हूँ जितना तुम, और मैं भी मातृभूमि के लिए हँसते हुए उसी प्रकार जान देने को तैयार रहा करता हूँ जितना कि तुम—पर मेरे और तुम्हारे बीच में जो अन्तर है वह यह है कि तुम वर्तमान को देख रहे हो और मैं भूत का स्मरण करता हूँ। आज अगर कही एक जगह गोली चल जाती है और दो चार या दस—(अमर—धीरे से—"पन्द्रह सौ !") हां हां, कभी कभी पन्द्रह सौ भी !!......जो इस देश की पूरी जन-संख्या का पासंग भी नही है—आदमी मर जाते हैं तो तुम लोग चिल्लाने लगते हो, पर बस। वह जमाना तुम भूल गये जब रह रह कर विदेशी डाकुओं का आक्रमण इस देश पर होता था और दिल्ली जैसे शहरों में ही नही हर एक हिन्दू तीर्थ और छोटे बड़े गावों तक में खून की नदियां बहने लगती थी ? आज कही कोई पागल राज-कर्मचारी या किरानी अगर किसी स्त्री पर हाथ

छोड़ देता हैं तो तुम लोग जमीन आसमान एक कर देते हो पर क्या मुगलों पठानों या पृथ्वीराज का ही जमाना तुम्हें याद नही जब औरतें गाय बैल या भेंड़ बकरी की तरह मारी छीनी लूटी और बेइज्जत की जाती थीं और दूसरों की स्त्री बहिनों या लडकियों को जबर्दस्ती उनके व्याह के मंड़वों से, डोलों पर से और घरो में से जबर्दस्ती छीन कर ले जाई जाती थी और दूसरों की बहू बेटी को बलपूर्वक ले भागना सभ्यता, नही नही, धर्म वीरता और गौरव की बात समझी जाती थी ? आज तुम इस राज्य के निवासियों को पंगु बनाने का इलजाम अंगरेजों पर लगा रहे हो पर क्या वे दिन तुम्हारी आंखों के ओझल हो गये जब पिन्डारी, ठग, डाकू और लुटेरे गांव के गांव और शहर के शहर तबाह कर देना कुछ नही समझते थे ! अमर, तुम्हें उन दृश्यो की याद नही, पर मैं अपने दादा के मुंह से खुद उन पर बीती सुन चुका हूँ और कलेजे पर हाथ रख के कहता हूँ कि उस समय की स्वतंत्रता के जमाने से आज की पराधीनता का युग कही अच्छा है, बहुत अच्छा है, लाख बार अच्छा है। अमर, मैं अपने दादा के मुंह से सुनी सिर्फ एक घटना तुम्हें सुना सकता हूँ जब नादिरशाह के जमाने में दिल्ली में कत्लेआम हुआ था और मारे जाने के डर से भागते हुए उसे एक तंग गली में एक पर एक सीढ़ियों की तरह खडी हुई लाशों पर से और उसे कुचलते हुए निकल कर दूसरी तरफ भागना पड़ा था। आज का सुख, आज की शान्ति, आज की स्वाधीनता, आज की उन्नति देख कर हो मै चाहता हूं कि न्यायी अंगरेजों का साया इस देश पर सदा बना रहे जिनके शासन मे बाघ और बकरी एक घाट पानी पीते हैं, और इस व्यवस्था को पलटने की चेष्टा करने वालों से भगवान बदला ले ! अमर, अपने इसी विश्वास के कारण मैं इस हुकूमत के साथ हूं, न कि किसी लालच-वश !”

पिता ने पुत्र की ओर देखा,पुत्र ने पिता को आँखों में निहारा। आज पहिले पहिल एक ने दूसरे के मनोभावों को समझा, आज पहिले पहल एक ने दूसरे को ठीक ठीक पहिचाना।

कुछ देर तक घोर सन्नाटा छाया रहा। न जाने इस बीच में क्या क्या विचार इन दोनों बाप बेटों के दिलों से गुजर गये। आखिर अचानक एक ने दूसरे की ओर हाथ बढ़ाया, एक के गले में दूसरा दिखाई पड़ने लगा, एक की छाती से दूसरा चिमट गया।

थोड़ी देर बाद दोनों अलग हुए। यद्यपि अब भी दोनों की आँखे डबडबाई हुई थीं फिर भी दोनों के कलेजों में नया बल आ गया था। अमर ने अपने पिता से कहा, "बाबूजी,–आज आखिरी बार मैं आपको इस प्यारे नाम से पुकारता हूँ—मैंने जो कुछ कहा उसको क्षमा कीजियेगा, और जो कुछ अब कहने जा रहा हूँ उसे भी—पर मेरे आपके सिद्धान्तों में जमीन आसमान का फर्क है। आप पुराने जमाने में घूमते हुए इन राक्षसों के शासन को अच्छा समझते हैं पर मैं वर्तमान में रह रहा हूं और उसे देखते हुए इन अंगरेजों के राज्य को बहुत बुरा समझता हूं तथा उसे हटा कर अपने देशवासियों को ही हुकूमत की गद्दी पर पुनः बैठा देखना चाहता हूं। आज के परतन्त्रता-युग की यह शान्ति मेरे मन में घृणा उत्पन्न करती है जिसकी आप इतनी प्रशंसा कर गए, और आज की शान्ति से उस स्वतंत्रता-युग की मारकाट लूटमार, और कत्ले आमों को मैं लाख गुना अच्छा समझता हूँ जब मर्द सचमुच मर्द होते थे और औरतें औरतें। यह मेरा

निश्चित मत है और मुझे बहुत खेद है कि मै इसको किसी लिये, किसी के लिये, आप के लिये भी, बदल नही सकता। केवल मेरी प्रतिज्ञा ही नही मेरा विश्वास भी इसमे बाधा डालता है—अस्तु, आज से हमारा आपका रास्ता अलग होता है। आप अपने तय किये हुए रास्ते से चले, मै अपने रास्ते लगता हूँ। अब इसे तो ठीक-ठीक भगवान ही जानता है कि किसका मार्ग, किसका विचार ठीक है, किसे सफलता मिलेगी, अथवा किसे मिलनी चाहिये!"

रघुवीरसिह ने मजबूत आवाज में कहा, "बेटा, मैंने भी यह बात मंजूर की। आज अन्तिम बार तुम्हे 'बेटा' पुकार कर कहता हू कि हमारा बाप बेटे का रिश्ता इस समय से टूटता है। आज से मै तुम्हारा दुश्मन, जानी दुश्मन हुआ। अब मै तुम्हारे साथ कोई रहम न करूँगा, हमेशा तुम्हे एक मामूली बलवाई की हैसियत से ही देखता और वैसा ही बर्ताव भी करता रहूँगा हाँ, तुमने एक बार मेरी जान बचाई है, इसके बदले मे एक बार तुम्हारी भी जान मै जरूर बचा दूँगा।"

अमर बोला—"मगर मै वैसा न करूँगा! आज से मैं आप को अपना और अपने मंडल का जानी दुश्मन समझूँगा। विश्वास रखिये कि आज से अगर आप कभी मेरे या मेरे मंडली की राह में आडे आए तो मैं आपसे एक दुश्मन, नही नहीं—एक जासूस—सा बर्ताव करूँगा और जरूरत पडने पर आपकी जान

तक भी उसी प्रसन्नता से ले लूँगा जिससे मैं इस समय किसी हत्यारे की लेता।"

वाप बेटे ने अन्तिम बार एक दूसरे को गले से लगाया, इसके बाद चुपचाप दोनों टीले के दो तरफ उतर गये। देखते देखते अंधकार ने दोनों को अपनी गोद में छिपा लिया।

दूसरा बयान

सुन्दर और आलीशान मकान के दर्वाजे पर एक मोटर आ कर रुकी और उसमे से छम-छिम करती हुई एक 'बाईजी' उतर कर बड़ी अदा के साथ फाटक के अन्दर घुसी। पहरेदार ने सलाम किया और एक नौकर आगे होकर रास्ता दिखाता हुआ उन्हे बगली सीढ़ी की राह ऊपर की मंजिल के उस सजे हुए कमरे मे ले गया जो रोशनी से जगमगा रहा था।

इस कमरे मे दो नौजवान गद्देदार कुर्सियो पर बैठे सिगरेटों का धूआँ उड़ा रहे थे। इन दोनो में से एक तो इस मकान के मालिक के बेटे बाबू लक्ष्मीकान्त थे और दूसरे उनके प्यारे दोस्त और लंगोटिया यार गणेशदास। इन दोनों ही का कुछ संक्षिप्त परिचय यहाँ दे देना आवश्यक जान पड़ता है।

ये लक्ष्माकान्त यहाँ के बहुत बडे और पुराने रईस लाला श्रीनिवास क पुत्र है। कई कारणो से इनके बाप से इनकी अनबन हो गई है जिससे इनके पिता ने अपना यह पैत्रिक भवन इनके सुपुर्द कर अपना डेरा बाग मे डाल रक्खा है। बाप बेटे में यहाँ तक तनाव बढ़ गया है कि एक को दूसरे का मुंह देखे महीनो हो जाते हैं। इस झगड़े का ठीक कारण कहना तो कठिन है परन्तु इतना प्रगट है कि लक्ष्मोकान्त आजकल खुली ऐयाशी पर उतारू हुए भये है और दोनो हाथो से दौलत फूंक रहे है। परन्तु फिर यह भी है कि इस बात की शिक्षा इन्हे

खास अपने पिताजी से ही मिली है जो अपनी आज की इस अधेड़ उमर में भी दो तीन सदासुहागिनों को बराबर अपने साथ बाग मे रखते हुए बिल्कुल नही सकुचाते।

गणेशदास इन लक्ष्मीकान्त के पुराने दोस्त है। किसी जमाने में ये—लक्ष्मीकान्त तथा गणेशदास—एक ही दर्जे में पढते थे पर बीच में साथ छूट गया था। इधर साल भर से पुनः साथ हुआ है और इतने ही समय में ये पुनः इनके लंगोटिया यार और संगी बन गये है। जहाँ लक्ष्मीकान्त का पसीना बहे वहाँ अपना खून बहाने को तैयार रहते है, और उनके लिए अपना 'सर्वस्व अर्पण' करने को सदा तत्पर रहते है। मगर जमाना इनके बारे में यही कहता है कि अपने पुरखों को छोड़ी हुई लाखों की दौलत फूंक ताप कर कगाल होने के बाद ये 'काठ के घुन' की तरह लक्ष्मीकान्त से चिपके है और उन को इन्हों ने चौपट कर रक्खा है। बस इस समय इन दोनो नौजवानो का इतना ही परिचय देकर हम आगे बढ़ेगे।

'बाईजी आ गई'—नौकर के मुंह से इतना सुनते ही लक्ष्मी-कान्त चमक कर उठ खड़े हुए और झपट कर आगे बढ़े। उधर बाईजी ने भी फुर्ती दिखाई और दोनो एक दूसरे की बाहों में दिखाई देने लगे। गणेशदास एक जरूरी बात नौकर को बताने के लिए बाहर चले गये जिससे थोड़ी देर के लिए कमरे में एक दम निराला हो गया। कहना नही होगा कि इस अवसर को लक्ष्मीकान्त ने व्यर्थ नही जाने दिया।

काफी देर के बाद जोरों से खांसते हुए गणेशदास पुनः कमरे के अन्दर दाखिल हुए। उस समय ये दोनों प्रेमी एक दूसरे के

कंधों में हाथ डाले हुए कोच पर बैठे मीठी-मीठी बातें कर रहे थे। गणेशदास को देखते ही बाईजी ने मधुर मुसकान के साथ कहा, "क्योंजी, वादा याद है न!" गणेशदास ने तुरन्त कहा, "हां हां, यह देखो टिकट भी मौजूद है!" कह कर उन्होंने थियेटर के कई टिकट जेब से निकाल कर दिखाये और कहा, 'लेकिन चलना है तो अब और देर न करना चाहिए, वक्त हो गया है!'

लक्ष्मीकान्त ने इन दोनों की तरफ देखते हुए ताज्जुब से पूछा, "यह कहां जाने की सलाह हो रही है!" जिसके जवाब में बाईजी ने उनके गले में दोनों बाहें डाल कर कहा, "थियेटर!—चलो कपड़े पहिनो, देर मत करो!"

लक्ष्मीकान्त चौक कर घबराहट के साथ बोले—"थियेटर, और तुम्हारे साथ!"

बाईजी कुछ कुरुखी से बोली, "क्यों, मैं क्या डायन हूं कि तुम्हें खा जाऊंगी!!"

लक्ष्मी०। नही नही, सो बात नही है, पर वहां इस तरह खुले आम हजारों आदमी तुम्हारे साथ मुझको देखेंगे तो क्या कहेंगे?

बाईजी०। कहेंगे क्या? अपना सिर और मेरी जूती! तुम्हें चलना पड़ेगा!!

लक्ष्मी०। नहीं भाई इसके लिये तो माफ करो! और जो

कुछ कहो मैं करने को तैयार हूँ पर इस तरह खुले आम तुम्हें लेकर थियेटर जाते मुझे ब ी शर्म मालूम होगी।

बाईजी०। (रुख बदल कर) अच्छी बात है, मत जाओ, मैं समझ गई कि तुम मुझे कितना प्यार करते हो एक मामूली सी बात टाल रहे हो—अच्छा ! कोई बात नहीं !!

कह कर एक लम्बी साँस ले बाईजी ने मुंह फेर लिया। न जाने कहाँ से कुछ बूंदें भी उनके गालों पर आ ढुलकीं जिन्हें वह अपने रेशमी रूमाल से पोंछने लगीं।

यह रंग कुरङ्ग देख लक्ष्मीकान्त की तो अजीब ही कैफियत हो गई। कहाँ तो आज वह स्वर्ग-सुख अनुभव करने की आकांक्षा में था और कहाँ यह नर्क सा दुःख सामने दिखाई पडने लगा। उसने बेचैनी के साथ बाईजी का हाथ पकड़ा मगर उन्होंने झटकार दिया। अब तो लक्ष्मीकान्त की हालत और भी खराब हो गई। उसने एक बेचैनी की निगाह गणेशदास पर डाली।

गणेशदास ने उनकी तरफ झुक के धीरे से कहा, "क्या बतावें दोस्त, यह तो सारा मजा किरकिरा हुआ चाहता है ! क़िस्मत की मार कि मैं इनसे वादा भी कर बैठा कि थियेटर दिखाऊँगा। मगर खैर अब जैसे भी हो इनका मन तो रखना ही होगा। चलो फिर पहनो कपड़ा !"

लक्ष्मी०। (गर्दन घुमा कर) मगर भाई थियेटर में हजारों

आदमी मेरे साथ इनको देखेगे, भला वे दिल मे क्या सोचेगे ?

गणेश०। अरे कौन किसको देखता है ? सब अपनी अपनी फिक्र में लगे रहेगे, और हम लोग तो बाक्स मे चलेंगे जहां पर्दे पडे रहते हैं, वहां कौन भीतर झांक कर देखेगा, और फिर जब हजारों ही रईस ऐसा करते है तो तुम्ही करोगे तो क्या होगा ? यह कोई बुरी बात नही है। अगर ऐसा ही खयाल है तो वाहर की सीटो पर अलग अलग बैठ जाना, कौन जानेगा कि ये तुम्हारे ही साथ आई है।

बाईजी०। (लक्ष्मीकान्त को फिर भी चुप देख घूम कर गुस्से से) अजी गणेश, तुम किससे बेकार को बहस कर रहे हो। ये आदमी नही है हिजड़े हैं। सिफ टट्टी की ओट से शिकार खेलना जानते है। घर मे छिप कर सब कुछ कर लेगे मगर बाहर किसी का सामना करते नानी मरता है, हयादार जो है ! जाने दो, क्यो इन्हे तङ्ग करत हो !!

बेचारे लक्ष्मीकान्त की अजीब हालत थी। उसके एक तरफ कूआं था तो दूसरी तरफ खाई। बेचारे ने बहुत कुछ छोगपगहा तुड़ाया पर आखिरकार उसकी हिम्मत और हया ने एकदम ही जवाब दे दिया और उसे अपने दोस्त और अपनी रंडी को लेकर थियटर चलने के लिये तयार होना ही पड़ा।

फिर भी इस ऐंचातानी मे देर तो हो ही गई थी। जिस समय इनकी मोटर थियटरघर की बरसाती के नीचे पहुची उस समय खेल शुरू हुए आधा घंटा बीत चुका था। जल्दी-जल्दी

पहुंच अपने बाक्स मे घुस बैठने को धुन में लक्ष्मीकान्त ने किसी तरफ नही देखा और बढ़ते ही चले गए, पर जब वे आराम से मखमली गद्दे वाली कुर्सी पर बैठ गये और उनकी बाईजी भी बगल में डट गई तब उन्होंने बाक्सों की पंक्ति के दूसरी तरफ नजर फेरी और अपने ठीक सामने पड़ने वाले अंतिम बाक्स मे अपने पिता लाला श्रीनिवासदास को देखा जो दूरबीन आँखों के सामने किये सीधे उन्ही की तरफ देख रहे थे। तुर्रा तो यह था कि उनकी दोनों बगलों में भी इस समय दो सदासुहागिनें बैठी हुई थीं।

बाप ने बेटे को देखा, बेटे ने बाप को! बाप की रण्डियों ने बेटे की रण्डी को देखा और मुस्कुराई, बेटे की रण्डी ने भी बाप की रण्डियों को देखा और हँस दी। और भी कितनी ही कुरसियो पर वाले लोग छिपी निगाहों से यह नजारा देख रहे थे पर इस समय केवल इन दोनों बाप बेटों की निगाहें धरती में गड़ी हुई थी। पिता को देख लक्ष्मीकान्त की आंखे पृथ्वी में गड़ गई थी, और उधर पिता की अपने लड़के को देख कर झुक गई थी।

बहुत कुछ बुराइयां कर चुकने पर भी अभी तक शील ने लक्ष्मीकान्त का साथ न छोड़ा था। यद्यपि वह जानता था कि उसके पिता रण्डियों के प्रेमी हैं, केवल इतना ही नही यह भी जानता था कि उसके पिता भी इस बात को जानते है कि वह भी एक रण्डी के पीछे अपना तन मन धन न्योछावर कर रहा है, फिर भी इस तरह का प्रत्यक्ष सामना दोनो का आज तक कभी

भी नही हुआ था। इस समय रण्डी बगल मे लिये बैठे पुत्र को अपने सामने ठीक उसी तरह बैठे अपने पिता को देख इतनी शर्म आई कि वह सोचने लगा—"जमीन फट जाती तो मैं उसमें समा जाता।"

पर यह भाव भी देर तक न रहा। कुछ ही देर बाद तो ऐसा हो गया कि आँखें झुकाए बैठे रहना भी लक्ष्मीकान्त के लिये असम्भव हो गया। उसने अपने दोनों बगल छिपी निगाहों से देखा। बाईजी कुछ आगे की तरफ झुकी अपने दूसरे प्रेमियों से 'निगाहे चार' कर रही थीं, और गणेशदास ऊपर दोनों तरफ वाले जनाने डिब्बों की तरफ एक-टक नजरें गड़ाये हुए था। लक्ष्मीकान्त को मौका मिला। विना किसी से कुछ कहे वह धीरे से उठा। उसके दोनों साथी अपनी अपनी ताक-झांक में इतना डूबे हुए थे कि किसी को कुछ आहट न लगी और वह चुपके से बाक्स के बाहर निकल आया। बाहर होते ही वह बेतहाशा लपका और दौड़ कर दो दो तीन तीन सीढ़ियाँ तय करता हुआ नीचे की मंजिल में पहुंचा। यहाँ पहुंच कर भी उसने दाये बायें किसी तरफ न देखा और झपटता हुआ थियेटर हाल के फाटक के बाहर निकल गया।

एक सायत के लिए भी अपना पैर बिना रोके वह थियेटर के बगल वाली गली में घुस गया और यहाँ पहुँच कर तो न जाने क्या सोच बेतहाशा दौड़ा। जाने इस समय क्या क्या विचार उसके दिल पर चोट मार रहे थे—परन्तु सब से ऊपर उसके मन में

दोही बाते थी—एक तो यह कि उसके पिता ने हजारों आदमियों के सामने उसे रण्डी के साथ देखा, और दूसरा यह कि वह रण्डो और गणेशदास कहीं उसे पकड़ने न दौड़ पड़ें। वह अपने और उनके बीच में जितना बड़ा भी हो सके फासला डाल देना चाहता था।

गली में बेतरह अंधेरा था। कदम कदम पर ठोकरें लगती थीं, पर लक्ष्मीकान्त को परवाह न थी, वह केवल बेतहाशा भागा ही चला जा रहा था, परन्तु यकायक उसे रुक जाना पड़ा क्योंकि उसके कानों में पास ही कहीं कई बार पिस्तौल छूटने की आवाज और इसके बाद ही किसी के चिल्लाने का शब्द सुनाई दिया जिससे वह ठिठक गया। आज तक वह कभी इस गलो मे न आया था पर अन्दाज से इतना कह सकता था कि यहां से कुछ ही दूर और ठीक सामने की तरफ पड़ने वाली सडक पर ही कही कोई दुर्घटना हो गई है। उसके पैर रुक गये—इस लिए नहीं कि पिस्तौल की आवाज ने उसे दहला दिया, नही बल्कि इसलिये कि एक आम सड़क उसके सामने है और वह पुनः उसी रोशनी और मनुष्यों की भीड़ मे पहुंच रहा है जिससे बच कर अभी अभी भागा था।

"क्या करूं, किधर जाऊं!" सोचता हुआ वह दो हो सायत के लिये रुका था कि सामने की तरफ से किसी दौड़ते हुए आने वाले की आहट मिली और इसके साथ ही किसी आदमी ने उससे टक्कर ली। कुछ आश्चर्य में और कुछ उस आदमी को

टक्कर खाकर गिर जाने से बचाने की नीयत से लक्ष्मीकान्त ने दोनों हाथों से उसे पकड़ लिया, पर पकड़े जाने के साथ ही उस मनुष्य ने कड़े स्वर में कहा, "खबरदार! मुझ पर से हाथ हटा लो, अपने को जीता देखना चाहते हो तो मुझे छोड़ दो, नहीं अभी खोपड़ी उड़ा दूंगा!!" लक्ष्मीकान्त के सिर से कोई ठंडी चीज छू गई और उसे यह समझने में देर न लगी कि यह पिस्तौल की नली है।

मगर उस आदमी की वह बात सुनते ही लक्ष्मीकान्त ठठा कर हँस पडा और उसके कधे पर हाथ रख कर कर बोला, "वाह यार, तुम भी बड़े अच्छे मौके पर मिले! मैं इस समय अपनी मौत ही खोज रहा था। लो, तुम जल्दी से अपना काम करो और मुझे उस शर्मिन्दगी से छुडाओ जिसने मुझे हजारों आदमियों के सामने वेइज्जत किया है!"

यह विचित्र बात और लक्ष्मीकान्त की अद्‌भुत हँसी सुन वह आदमी कुछ चौंक सा गया। एक सायत के लिये थम कर वह बोला, "तुम भी बड़े विचित्र आदमी जान पड़ते हो! मगर चाहे तुम कोई भी हो, मैं ठीक कहता हूँ कि अगर तुम अभी मेरे रास्ते से नहीं हटते तो मैं तुम्हारी खोपड़ी उड़ा दूँगा!!"

लक्ष्मी०। मुझे तुम्हें रोकने की कोई भी जरूरत नहीं है पर चूँकि तुम उस मौत को इस तरह हाथों पर लिये फिर रहे हो जिसका मुझे इतनी खोज है सिर्फ इसीलिये मैं पूछता हूँ कि अगर

हर्ज न हो तो इतना बताते जाओ कि तुम कौन हो और क्या काम तुमने किया है जो इस तरह भाग रहे हो ?

इतना कह लक्ष्मीकान्त ने अपने हाथ उस आदमी के बदन पर से हटा लिये और एक बगल हो गया। मगर उसी समय कहीं से किसी के जोर से—"इधर आओ, इधर आओ, यहां है !!" कहने की आवाज सुनाई पड़ी और साथ ही बहुत से आदमियों के दौड़ते हुए आने की आहट भी मिली। वह आदमी यह सुनते ही पुनः भागा मगर लक्ष्मीकान्त भी सहज में पीछा छोड़ने वाला न था—वह भी उसके साथ साथ ही दौड़ने लगा और बोला, "मुझसे बिल्कुल डरो मत और न ठहरो ही, पर यह बताते चलो कि तुम कौन हो ? शायद मैं तुम्हारी कुछ मदद कर सकूं। कुछ तो मैं समझ गया हूं पर फिर भी पूछता हूं और साथ ही वचन-पूर्वक प्रतिज्ञा करता हूं कि तुम्हारा कोई भी अनिष्ट न करूंगा बल्कि जहां तक होगा मदद ही करूंगा !!"

लक्ष्मीकान्त की बातों में जोश और सचाई की कुछ ऐसी झलक थी कि उस भागनेवाले को उस पर थोड़ा बहुत विश्वास करना ही पड़ा। उसने दौड़ते दौड़ते ही कहा, "मैं पुलिस कमिश्नर कार्टर का खून करके भाग रहा हूं !"

लक्ष्मीकान्त बोले, "ठीक है, मैं समझ गया, अच्छा तब तुम इधर आओ।"

यहां एक तिरमुहानी सी थी जहां से एक रास्ता पुनः उस

थियेटर की तरफ ही घूम जाता था और दूसरा ठीक उसकी विपरीत दिशा में निकल गया था। भागनेवाला किधर जाय या क्या करे यह सोचता हुआ एक सायत के लिये रुक गया था और पीछा करने वालों की आहट नजदीक होती जा रही थी। भागने वाले को हिचकते देख लक्ष्मीकांत ने उसका हाथ पकड़ लिया और धीमी मगर मजबूत आवाज में कहा, "बिल्कुल डरो मत, पिस्तौल जेब मे रक्खो और मेरे साथ शान्ति-पूर्वक बढ़े आओ, मेरी मोटर यहीं कहीं पर है।"

लक्ष्मीकान्त के स्वर में कुछ ऐसी मजबूती आ गई थी कि अपनी इच्छा के विपरीत भी उस आदमी को ऐसा ही करना पडा और वह पिस्तौल जेब में रख लक्ष्मीकान्त के साथ साथ दौड़ने लगा। कुछ ही आगे बढ़ने पर एक तंग सड़क मिली और यहीं लक्ष्मीकान्त को अपनी मोटर खड़ी नजर पड़ी जिसकी तरफ अपने साथी का हाथ पकड़े वह तेजी के साथ बढ़ा और उसी समय पीछे की तरफ मगर दूर से आवाज आई, "वे हैं, वे हैं, देखो वे दोनों भागे जा रहे हे !"

लपक कर लक्ष्मीकान्त और उसका साथी मोटर पर चढ़े और लक्ष्मीकान्त ने कहा, 'गोपाल, चलो जल्दी !' मगर किसी ने कोई जवाब न दिया। उसी समय लक्ष्मीकान्त ने देखा कि मोटर खाली ह और उसका शोफर गोपाल उसमे नहीं हे।

पीछा करने वाले लपके चले आ रहे थ और ड्राइवर का पता नहीं। लक्ष्मीकान्त घबड़ा गया क्योंकि अब इतना मौका

नहीं था कि ड्राइवर को पुकारा जाता या उतर कर किसी दूसरी मोटर या टैक्सी में चढ़ते। उसके मुँह से बेचैनी के साथ निकला—'बुरे फँसे!' मगर उसका साथी बिल्कुल न घबड़ाया। वह तुरत उछल कर ह्वील के पास जा बैठा और बोला, "कोई घबड़ाने की बात नहीं है, चुपचाप बैठे रहो मगर इसे हाथ में रक्खो, कोई हमला करे तो तुम भी जवाब देना।"

बोलने वाले का हाथ उसकी जेब में गया और साथ ही लक्ष्मीकान्त ने अपनी हथेली में एक दूसरी पिस्तौल की मूठ पाई। उसी समय उसकी मोटर एक झटके के साथ आगे बढ़ी। देखते देखते तो वह हवा से बातें करने लगी, जरा ही देर बाद ताकतवर इञ्जन पूरी तेजी से चलने लगा था।

लक्ष्मीकान्त ने पीठ वाली खिड़की से झाँक कर देखा। बहुत दूर पीछे थियेटर हाल के सामने दो मोटरों पर कई सिपाही फर्ती फुर्ती चढ़ते दिखाई पड़ रहे थे पर उसने इसकी फिक्र न की क्योंकि वह जानता था कि इस समय इस शहर में उसकी मोटरकार से तेज जाने वाली कोई दूसरी मोटर नहीं है, पुलिस की भी नहीं। वह पिस्तौल पर प्यार से हाथ फेरता हुआ गद्दी से उठंग गया और इन चन्द ही मिनटों में जो कुछ इतनी फुर्ती-फुर्ती उसके ऊपर से गुजर गया था उस पर विचार करने लगा। उसकी कार इस समय हवा से बातें कर रही थी और शहर का घना हिस्सा पीछे छूट चुका था।

(२)

काफी देर तक मोटर आंधी की तरह भागती रही। इस बीच वह इतने मोड़ घूमी और इतनी सड़कों पर से गुजरी कि खुद लक्ष्मीकान्त भी कुछ नहीं कह सकता था कि अब वह किस दिशा में जा रहा है अथवा अपने महल तो क्या शहर से ही कितनी दूर आ गया है। पीछा करने वालों का कहीं नाम निशान भी नही था और रात का सन्नाटा चारो तरफ भाँय-भाँय कर रहा था। जिसको केवल इस मोटर के इंजिन का शब्द तोड़ रहा था।

यद्यपि पिछली थोड़ी देर के अन्दर लक्ष्मीकान्त के मन पर तरह तरह के भावों का असर पड चुका था और इतनी ढेर की ढेर घटनाएं उस पर से गुजर चुकी थीं कि जो साधारण मनुष्य की आधी जिन्दगी में भी शायद नहीं आतीं फिर भी उसका स्वभाव कुछ ऐसा भोलादोला और लापरवाह सा था कि उसे किसी बात की कुछ विशेष चिन्ता न थी या अगर थी भी तो केवल इसी बात की कि इस समय कोई मुलायम विस्तर होता तो खूब मीठी नींद आती। इस आनन्ददायक विचार का उसे इतना ध्यान बँधा कि धीरे धीरे न जाने कब उसने मोटर की गद्दी पर उठंगे उठंगे ही आंखे बन्द कर ली और कुछ ही देर बाद तो घुर्राटे भी भरने लगा।

जिस समय उसके खूनी साथी ने हाथ का धक्का दे देकर उसे जगाया उस समय वह गहरी नीद में था फिर भी वह तुरत ही

चैतन्य हो गया और एक अंगड़ाई लेते हुए बोला—"कहो क्या कहते हो ?"

उसके साथी ने कहा, "अब मैं जाता हूं।" लक्ष्मीकान्त चौंक कर बोला, "कहां ?" उसने हंस कर कहा—"जहां मेरा स्थान है, वहीं और कहां ? तुमने मेरी बड़ी मदद की, इसके लिए धन्यवाद !"

लक्ष्मीकान्त की नींद बिल्कुल भाग गई और वह एक दम चैतन्य हो कर उठ खड़ा हुआ पर इसके पहिले कि वह कुछ कह सके वह नौजवान आगे बोला, "खैर मैं तो अब जाता हूं मगर तुम इस वक्त अपने घर क्या अपने शहर से भी बहुत दूर हो और शायद तुमको मोटर हाँकना भी नहीं आता, सो तुम यहाँ इस जंगल बियाबान से अपने महल कैसे पहुंचोगे ?

लक्ष्मी०। वह सब कुछ मैं सोच चुका हूं। तुम पहिले यह बताओ कि थोड़ी ही देर बाद पुलिस यहाँ आ पहुंचेगी और उस समय मेरी मोटरकार यहाँ देख कर क्या सोचेगी। यहाँ से पता लगाते हुए वह तुम्हारे घर या अड्डे तक नही पहुंच जायगी ?

नौजवान जोर से हंस कर बोला, "वह डर मत करो ! हम लोग इस तरह के काम तो हमेशा करते ही रहते हैं और पुलिस की आँखों में धूल झोंकना भी खूब जानते है, तब इतना मैं जरूर पूछूंगा कि तुम इस मौके पर कर ही क्या सकते हो ?"

लक्ष्मी०। (हंस कर) पेट्रोल छिड़क कर एक दियासलाई लगा देने मात्र से बहुत कुछ काम बन जायगा !

कष्ट और मृत्यु का । अबोध युवा ! अगर तुम नाम और गौरव कमाना चाहते हो तो नेता बन जाओ और अगर शान्ति और मुक्ति चाहते हो तो साधू साधक संत या महात्मा बन बैठो। क्रान्तिकारी का मार्ग तुम्हारा नहीं है क्योंकि यह देशोद्धार का और इसी लिये फांसी का रास्ता है।"

कहते कहते जोश के मारे युवक का स्वर कांपने लगा, पर लक्ष्मीकान्त के ऊपर इसका कुछ एक दम उलटा ही सा असर पड़ा और उसकी आंखों से आँसू बहने लगे। उसने युवा का हाथ प्रेम से पकड़ लिया और कहा, "वीर, मैं तुम्हारे दिल के भीतर जलती हुई आग की एक लपट देख पाया हूं और पुनः कहता हूँ कि मैं भी तुम्हारा साथी और सेवक बनना चाहता हूँ।"

युवा ने सिर हिला कर कहा, "नही, तुम लक्ष्मी के लाडले हो, तुम्हारे हृदय में बल नही है, साहस नहीं है ! तुम कष्ट नहीं उठा सकते, मातृभूमि के लिये हँसते हंसते जान नहीं दे सकते!"

लक्ष्मीकान्त की आँखें यकायक चमक उठी। उसने कुछ रोष से कहा, "क्या कहते हो !! क्या मुझमें साहस नही है ? बल नहीं है ? क्या बल और साहस का ठीका एक तुम क्रान्तिकारियों ने ही उठा रक्खा है ? यह मैं मानता हूं कि मातृभूमि किस चिड़िया का नाम है यह भी मैं नही जानता और जन्मभूमि के प्रेम का जिक्र अभी तक मैंने केवल किताबो में ही पढ़ा है, फिर भी जो तुम यह समझते हो कि मुझमें कष्ट सहने की ताकत नहीं है तो लो यह देखो......!!"

कहते हुए लक्ष्मीकान्त ने अपनी जेब से एक तेज चाकू निकाला और इससे पहिले कि वह युवा कुछ समझ या कह सके एक ही वार में उसने अपने बाएँ हाथ की छोटी उँगली काट कर अलग कर दी, केवल इतना ही नहीं उसने एक भीषण हँसी हंसी और दूसरे हाथ से उस उँगली को उठा कर अपने दाँतों से दतुअन की तरह चबाते हुए भयानक स्वर में कहा, "क्रान्तिकारी! खबरदार!! आगे से ऐसा शब्द कभी अपने मुंह से न निकालना कि लक्ष्मी की गोद में पलने वाले कष्ट नहीं सह सकते! मनुष्य के कष्ट सहने की शक्ति की थाह अब तक भगवान भी नहीं पा सका है!!"

—:०:—

तीसरा बयान

सैकड़ों कोस तक फैले हुए विस्तृत जिले संवलपूर के चीफ कमिश्नर को इस रात के समय में भी चैन नहीं है और उसके बंगले का बाहरी बारामदा मुलाकातियों और दरबारियों से भरा हुआ है।

यों तो नित्य ही 'जी हुजूर' और 'सरकार माई-बाप' कहने वाले खुशामदियों की कमी नहीं रहती थी पर आज विशेष रूप से भीड़ हो जाने का कारण यह है कि दो ही रोज पहिले देश के पश्चिमी भाग की इस राजधानी में यहाँ की दो मुख्य जातियों सिखों और हिन्दुओं में भयानक दंगा हो गया है जिसके फल-स्वरूप चालीस से अधिक जानें गई है और सैकड़ों ही लोग जख्मी हुए हैं। इस दंगे से प्रान्त भर में एक तरह का आतंक फैल गया है क्योंकि अभी भी वहाँ शान्ति नहीं हुई है बल्कि दोनों ही जातियों का जोश बढ़ता जा रहा है और शीघ्र ही अत्यन्त भयानक दूसरा एक दंगा होने की सम्भावना मालूम हो रही है। रईसों और अमीरों को तो पद पद पर ही अपना मान और मान से भी प्रिय धन लूट लिये जाने की चिन्ता रहती है अस्तु आज की इस जगह की भीड़ में बहुतेरे उसी श्रेणी के हैं और कमिश्नर साहब से मदद माँगने और दंगा शान्त करने के विषय में तरह तरह की राय और सलाहें देने आये हैं परन्तु इनके इलावे यहाँ बहुतेरे वे छोटे और बड़े अफसर भी हैं जिनकी 'ड्यूटी' में यह भी बिना लिखी पर सब से आवश्यक ड्यूटी है

कि कमिश्नर साहब को हफ्ते में कम से कम तीन बार तो जरूर ही सलाम कर आया करें।

साहब अपने भीतरी प्राइवेट आफिस में बैठे हुए हैं। इस समय इनके पास सिर्फ इस शहर के ज्वाइन्ट मजिस्ट्रेट पं० विशननारायण हैं जिनके इजलास में सिखों और हिन्दुओं वाले उस झगड़े का मुकद्दमा पेश है। अब तक इन दोनों में क्या क्या बातें हो चुकी हैं सो तो हम कह नहीं सकते पर आखिरी जो बात कह कर कमिश्नर साहब ने मुलाकात खतम की वह यह थी, "पंडितजी, आपका यह कहना ठीक है कि सिख सिर्फ दस मारे गये और हिन्दुओं की बत्तीस जानें गई हैं मगर मुझे यकीन है कि अगर आप गौर करेंगे तो मेरी तरह खुद भी इसी राय पर पहुंचेगे कि इस मामले में बिल्कुल कसूर हिन्दुओं का है जिन्हें सख्त सजा मिलनी ही चाहिए।"

एक लम्बी मगर दिल के भीतर ही रह जाने वाली साँस ले पंडितजी उठ खड़े हुए। कमिश्नर साहब की इस मामूली दोस्ताना सी 'राय' के मुकाबले में मुल्क का कडे से कडा क़ानून और बडे से बड़ा सबूत भी कोई वकअत नहीं रखता था। इच्छा हो या न हो, और न्याय कहे या न कहे, पर इस 'राय' के विरुद्ध जाने की हिम्मत पंडित विशननारायण नहीं कर सकते थे। क्या किसी सरकारी नौकर का इतना कलेजा रह जाता है कि अपनी आत्मा का कहा करे और जिले के कमिश्नर की 'राय' को न मान कर अपनी नौकरी को खतरे में डाले!

पंडितजी को उठते देख चीफ कमिश्नर साहब भी उठ खड़े हुए और बड़ी मिल्लत से उन्होंने उनसे सिर्फ हाथ ही नहीं मिलाया बल्कि कमरे के दरवाजे तक उन्हें पहुँचा भी गये जो आज तक किसी मातहत के साथ करते इन कमिश्नर साहब को शायद किसी ने भी देखा न था।

दरवाजे से लौट कुरसी पर बैठते ही खानसामा ने विजिटिंग कार्डों से भरी रकाबी साहब के आगे रख दी। नित्य से दूना ढेर देख साहब ने गुस्से से मोंछ चबाते हुए कहा, "लाट आफ डेविल्स!" और तब पेन्सिल से उलट पुलट कर उस ढेर में से दो कार्ड अलग किये जिन्हें खानसामा के हाथ में देते हुए उन्होंने कहा, "पहिले गोकुलसिंह को भेजो और उसके बाद दीनमुहम्मद को।" "जो हुक्म हुजूर!" कह खानसामा चला गया और कमिश्नर साहब ने बाकी कार्डों को रद्दी की टोकरी में उलट दिया।

थोड़ी ही देर बाद सरदार गोकुलसिंह ने अदब से दोहरे होते हुए कमरे में प्रवेश किया। जमीन छूती हुई लम्बी फर्शी सलामें करते ये उस कुर्सी की अगली पाटी पर बैठ गये जिसे खानसामा ने आगे बढ़ा दिया था। अपनी कुर्सी पर बैठे ही बैठे कमिश्नर साहब ने इनकी सलामों का जवाब केवल जरा सा सिर हिला कर दे दिया और तब पूछा, "कहिए सरदार साहब, अच्छी तरह तो?"

सरदार गोकुलसिंह एक नौजवान सिख रईस थे। इसी साल

इन्हें सरदार साहब की पदवी मिली थी और अब ये खास राजदरबारी मुसाहिबी पाने की खोज में थे जिसका पहिला सुराग खुशामद की सूरत में वे अच्छी तरह पा चुके थे। मगर नौजवान होने पर भी ये डरपोक परले सिरे के थे और परसों के दंगे ने इनके हवास फाख्ता कर दिये थे। उसी के सम्बन्ध में कुछ बातें करने इस समय ये आए भी थे।

चीफ कमिश्नर साहब की बात के जवाब में गोकुलसिंह ने हाथ जोड़ कर कहा, "जी हाँ, हुजूर के इकबाल से !!"

साहब०। कहिये शहर का क्या हाल-चाल है ?

गोकुल०। हुजूर शहर में तो बड़ा खौफ फैला हुआ है।

साहब०। क्यों ? क्या दंगे के सबब से ?

गोकुल०। जी हां हुजूर, दंगे का सबब तो हई है मगर ज्यादा डर इसलिए है कि हिन्दू लोग छिपे छिपे बड़ी बड़ी बंदिशें बांध रहे है और सुना गया है कि कल हो परसो में वे मिराज मडी लूट लेने की कोशिश करने वाले हैं।

साहब०। ओह यह तो आप लोगो का बिल्कुल झूठा वहम है।

गोकुल०। जी नहीं हुजूर यह बहुत पक्की खबर है। कल बाड़े वाले मन्दिर के हाते में उन लोगों की बड़ा भारी बैठक हुई थी जिसमें उन्होंने तय किया है कि सिक्खों के इस अड्डे को पूरी तरह से लूट लेना चाहिए। हुजूर को इसका पक्का इन्तजाम करना मुनासिब है क्योंकि यहाँ की रिआया और खास कर सिख लोग बहुत ही डर गये हैं।

साहब०। मोह इन्तजाम की कोई कमी नहीं है। जंट साहब पूरी मुस्तैदी से काम कर रहे हैं, और पुलिस भी होशियार है। जरूरत होने से फौज भी फौरन बुला ली जा सकती है, मगर मैं आपको यकीन दिलाता हूं कि सिखों का खौफ बिल्कुल बेबुनियाद है, उन्हें कोई खतरा नहीं है।

गोकुल०। तो भी हुजूर अगर कुछ बंदूकें और दीगर हथियार हमलोगों को...

कमिश्नर०। नहीं नहीं, इस वक्त नये सिरे से हथियार बिल्कुल नही दिये जा सकते, उनसे खतरा बढ़ेगा। मगर आप फजूल का खौफ खा रहे हैं सरदार साहब—क्या आप सरकार की ताकत पर भरोसा नहीं करते ?

गोकुल०। उसका तो भरोसा है ही हुजूर......

साहब०। तो बस बेफिक्र रहिए और अपने दोस्तों और साथियों को भी इत्तिला दे दीजिये कि बिल्कुल न डरें, किसी तरह का कोई खतरा न तो है और न पैदा होगा।

गोकुल०। बहुत खूब हुजूर, मगर दंगे में जो हिन्दू पकड़े गये हैं उनकी तो जरूर ही सजा होनी चाहिये क्योंकि उन्होंने पचासों ही बेकसूर सिक्खों की जानें ली हैं। हम लोगों ने सुना है कि नब्बे से ऊपर सिख मारे गये है और अढ़ाई सौ से ज्यादे जख्मी हुए हैं।

साहब०। नही नहीं, यह तो आप बहुत बढ़ा चढ़ा कर बता रहे हैं, फिर भी मैं अभी अभी यही जिक्र ज्वाइन्ट मजिस्ट्रेट

साहब से कर रहा था। आप यकीन रक्खे कि कसूरवारों को जरूर सजा मिलेगी।

गोकुल०। जी हाँ हुजूर, ऐसा ही होना चाहिये, नही तो अमन न होगा और न रिआया के दिल से डर ही दूर होगा।

कमिश्नर साहब ने सिर हिला दिया और तब मुलाकात खतम होने के ढंग पर कुर्सी जरा पीछे हटा ली। सरदार साहब उनका मतलब समझ उठ खड़े हुए और बड़े अदब से सलाम कर पीठ के पीछे चलते और बार बार झुक कर और भी सलामें करते हुए कमरे के बाहर हो गये। भला साहब कमिश्नर को वे अपनी पीठ किस तरह दिखा सकते थे!

उनके जाते ही खान बहादुर दीनमोहम्मद साहब आ धमके। साहब ने इनके आते ही बड़े तपाक से उठ कर हाथ बढ़ाया और स्वयम् एक कुर्सी खींच उन्हें उस पर अपने पास ही बैठाया। कमिश्नर साहब का अपने ऊपर इतना प्रेम देख खानबहादुर साहब तो ऐसे खतमी हो गये और बड़े अदब के साथ बोले, "हुजूर की तबीयत तो दुरुस्त है? सुना था कल हुजूर के दुश्मनों को......!"

साहब को कल कुछ सिर-दर्द बेशक हो गया था फिर भी इस बात को वे ढाल पीट कर सुनाना नहीं चाहते थे। और किसी मौके पर शायद वे बारूद की तरह भभक उठते पर आज अपने गुस्से को भीतर ही पी कर वे बोले, "आपकी मेहरबानी से बहुत अच्छी है। कहिये आपके मुहल्लों की क्या खबर है?"

खाँ०। हुजूर के इकबाल से सब अमन है, फिर भी परसों के दंगे की वजह से कुछ बेचैनी मुसलमानों में जरूर दिखाई पड़ती है जो यकीन है कि जनाब गवर्नमेन्ट बहादुर के इकबाल से जल्द दूर हो जायगी।

साहब०। उम्मीद है कि सब अमन रहेगा, फिर भी अगर आप लोगों को कोई खास इन्तजाम मंजूर हो तो गवर्नमेन्ट उसके लिये तैयार है।

खाँ०। हुजूर हम मुसलमानों को यह अन्देशा बराबर बना रहता है कि इस शहर में हम लोग बहुत कम हैं, कहीं कोई बहाना निकाल कर हिन्दू या सिख हमें लूट न ले। अगर हमारे मुहल्लों मे कुछ फौज कायम कर दी जाती तो बहुत बेहतर होता।

साहब०। बहुत अच्छा, मैं ऐसा ही करने की कोशिश करूंगा। यह तो सरकार का फर्ज ही है कि रिआया के जान माल की हिफाजत करे।

खाँ०। (सलाम कर के) हुजूर की ऐन एनायत है, हम लोगों को सरकार दौलतमदार का ही तो भरोसा है।

साहब०। भरोसा तो खैर खुदा का रखना चाहिये और या फिर अपनी ताकत का—हम लोग तो अपना फर्ज करेंहीगे, मगर सच फिर भी यही है कि वक्त पर अपनी ही ताकत काम आती है दूसरे किसी की नहीं।

खाँ०। बेशक बेशक, मगर हम मुसलमानों में यही तो खराबी है कि एक तो गिनती में बहुत कम, फिर कमजोर भी।

आपसे तो हुजूर कुछ छिपा ही न होगा कि किस तरह सिख जगह जगह गुरुद्वारों के अंदर-अखाड़े बना रहे हैं और हिन्दू लोग महावीरी दलों के नाम पर तलवार लाठी पटा बनैठी और कुश्ती आदि सीख रहे हैं पर हमारे भाई एक दम बेसुध बैठे हैं।

साहब०। नहीं नहीं, जिस्मानी ताकत हासिल करना बहुत जरूरी है। बेशक ही इससे मेरा मतलब यह नहीं कि वह आजकल की तरह आपसी दंगों में खर्च की जाय, बल्कि मैं यह बात हमेशा के लिये और मामूली तौर पर कह रहा हूँ। मैं बहुत खुश होऊंगा अगर मैं सुनूं कि मुसलमान लोग भी अपने जिस्म को मजबूत बनाने की कोशिश कर रहे हैं।

खां०। अगर हुजूर का हुक्म हो तो मैं कल ही एक अखाड़ा खोलवा दूं ?

साहब०। बड़ी खुशी से, बल्कि मैं खुद कभी मौका हुआ तो उसे देखने आऊंगा।

सुनते ही खानबहादुर साहब तो एक दम से फूल गये और एक अखाड़ा बनवा कमिश्नर साहब को खुश कर 'नवाब बहादुरी' का ख्वाब देखने में ऐसा गर्क हुए कि साहब से आगे कोई बात चलाना ही कुछ देर के लिये भूल गये। कमिश्नर साहब ने भी अपनी आकृति से मुलाकात खतम होने की सूचना दी और खाँबहादुर साहब उठ कर सलामें करते और उसी ढंग से बगली देते हुए पीठ पीछे कमरे के बाहर हो गये जिस तरह से सरदार गोकुलसिंह बहादुर गये थे।

(२)

एक सूनसान सड़क पर दो आदमी पैदल धीरे धीरे चले जा रहे हैं। इनके पैरों पर सेरों धूल चढ़ी हुई है और सिर तथा मुंह पर भी काफी गर्द है जिससे मालूम होता है कि वे कहीं बहुत दूर से इसी तरह पैदल मंजिल मारते चले आ रहे हैं। मोटी और मैली दोहर तथा पीठ पर बाँस की लाठी के सहारे लटकी हुई छोटी गठड़ी तथा डोरी लोटा साफ बता रहा है कि ये दोनों देहाती किसान या कोई छोटे मोटे जमींदार है पर वास्तव मे ये लोग कौन हैं इसे हमारे पाठक बखूबी जानते हैं क्योंकि इनमें से एक तो हमारा तीखा नौजवान अमरसिंह है और दूसरा बिगड़ा रईस लक्ष्मीकान्त। लेकिन ये दोनों इस तरह का भेष क्यों बनाये हुए हैं और कहाँ से आते अथवा कहाँ जाते हैं यह जानना हो तो पास आकर इनकी बातें सुनिये।

लक्ष्मी०। अच्छा तब? जब तुम्हे मालूम हो गया कि वे तुम्हारे पिता ही हैं तब तुमने क्या किया?

अमर०। तब तो मैं बड़े संकट में पड़ गया। अगर यह भेद खोलता हूँ तो मेरे पिता जीते नही बचते और नही खोलता तो मेरे 'रक्त-मंडल' का भेद खुलता है। आखिर मैंने निश्चय किया कि इस समय अपने पिता को होशियार करके यहाँ से भगा देना ही सब से उत्तम होगा पीछे जो होगा देखा जायगा। यह सोच मैं उस तरफ चला जहाँ वे चारो सलाह कर रहे थे, पर मुझसे भी पहिले महावीर नामक हमारे एक सदस्य को यह बात मालूम

हो गई थी कि रघुबीरसिंह जासूस भेष बदल कर इस मंडली में शामिल हो गया है और वह टेलीफोन के द्वारा यह सूचना दे ही रहा था कि मैं वहां जा पहुंचा। सब से पहिले तो मैंने टेलीफोन की तार काट दी और तब महाबीर से लड़ उसका भी काम तमाम कर डाला।

लक्ष्मी०। हैं, उसको मार ही डाला!

अमर०। हां, ऐसा न करता तो और करता ही क्या? महाबीर को सब भेद मालूम हो गया था और जरा भी देर करने से मेरे पिता की जान पर आ बनती। मैं महाबीर को अपना गुरू और पूज्य समझता था पर अपने पिता के लिये.. ...

कहते कहते अमर की आंखों में आंसू आ गये और उसके चेहरे से उसके दिल का कष्ट स्पष्ट प्रगट होने लगा। लक्ष्मीकांत ने यह देख कहा, "ठीक है ठीक है, मैं समझ गया। अपने पिता की जान बचाने के लिये गैर का खून करने में कोई हर्ज नही। मै अगर वहां होता तो मैं भी वैसा ही करता।"

अमर०। नही नहीं, मुझे इस बात का खयाल नहीं, ख्याल तो पूरा इस बात का है कि इसके थोड़ी ही देर पहिले मैं प्रतिज्ञा कर चुका था कि आज से बाप मां भाई बेटे का संबंध छोडता हूं और आवश्यकता पड़ने पर पिता तक का खून करने को तैयार रहूँगा। तुम भी तो अब यह प्रतिज्ञा कर चुके हो, बताओ तो ऐसा कर चुकने के बाद भी क्या तुम वैसा कर सकते हो॥

लक्ष्मीकान्त ने कुछ जवाब न देकर कहा, "अच्छा तब क्या हुआ ?"

अमर०। तब क्या ? मैं उन चारो के पास पहुंचा। मेरे पिता जी गुरुबख्शसिंह का रूप बना कर उस दल में शामिल हुए थे। मैंने झूठ मूठ ही रासबिहारी का हाथ पकड़ लिया और उससे कहा कि 'तुम ही रघुबीरसिंह हो।' इतना कह गुरुबख्शसिंह बने अपने पिता से बोला कि 'जाइये, उधर की गुफा में पानी है, ले आइये।' साथ ही मैंने उन्हें कुछ इशारा भी कर दिया। बस वे उधर गये और वहीं से मौका पा बाहर निकल गये।

लक्ष्मी०। वाह, खूब चालाकी की तुमने !

अमर०। चालाकी की या विश्वासघात यह तो मेरा ही जी जानता है, परन्तु उसी दिन महाबीरसिंह की मृत देह को छू कर मैंने वह कठिन प्रतिज्ञा की जिसको पूरा करने के लिये हम दोनों आज यहां पहुंचे हैं।

लक्ष्मी०। वह प्रतिज्ञा कौन सी ? तुमने कुछ बताया नहीं !

अमर०। मैंने शपथ ली कि इस पाप के बदले में सरकार के सात अफ़सरों को हत्या अपने हाथ से करूंगा और तब अपनी भी जान दे दूंगा।

लक्ष्मी०। और तब अपनी भी जान दे दूंगा ! मगर उतना कर चुकने बाद फिर ऐसा करने का भला क्या तुक ?

अमर०। रक्त-मंडल के साथ विश्वासघात करने वाले की सजा आत्मघात ही है।

लक्ष्मीकान्त चुप रहा, उसके पास कोई उत्तर था भी नहीं जो वह देता। दोनों चुपचाप जमीन की तरफ देखते हुए चलने लगे। थोड़ी देर बाद अमरसिंह ने कहा, "वह देखो चीफ कमिश्नर का बंगला दिखाई देने लगा, होशियार हो जाओ।"

दोनों ने अपनी अपनी गठड़ी जमीन पर उतारी और उसे खोल अन्दर से कुछ सामान निकालने लगे।

(३)

समूचे संबलपुर शहर में इस समय हड़ताल है। तीन चार दिन पहिले सिखों और हिन्दुओं के बीच एक तालाब के मामले को लेकर जो दूसरा भयानक दंगा हो गया है उसने लोगों के दिलों को डर और घबराहट से पूरी तरह से भर दिया है। तरह तरह की अफवाहें सब तरफ उड़ रही हैं और शीघ्र ही और भी भयानक रूप से नए नए दंगों के होने की खबरें फैल रही हैं जिनके खौफ से डरपोक और कमहिम्मत लोगों ने तो घर से बाहर निकलना ही छोड़ दिया है, हिम्मत और ताकत वाले भी बहुत समझ बूझ कर ही घर के बाहर पैर निकालते हैं। समूचे शहर की दूकानें बन्द हैं और गलियों और सड़कों पर बहुत ही कम आदमी चलते फिरते नजर आते हैं। संध्या के साथ साथ ऐसे लोगों की भी गिनती कम होती जा रही है और उम्मीद है कि रात छाने के पहिले ही सड़कों पर मौत का सन्नाटा हो जायगा।

ऐसे समय में हम एक कद्दावर आदमी को शहर के उन हिस्सों में एक दम अकेले घूमते देख रहे हैं जहाँ यों भी सन्नाटा

ही रहा करता है मगर खास कर आजकल तो बिल्कुल ही सूनसान रहता है। इस आदमी की घनी दाढ़ी ने इसके चेहरे का निचला हिस्सा छिपा रखा है और बड़े साफे ने माथे का काफी हिस्सा दबाया हुआ है जिससे इसकी सूरत ठीक पहिचानी नही जा सकती, फिर भी हम बताए देते हैं कि ये इस प्रान्त के मशहूर जासूस रघुबीरसिंह हैं जो किसी खास फिक्र मे इस तरफ की गश्त लगा रहे है।

घूमते फिरते रघुबीरसिंह एक ऐसी गली में पहुंचे जा इतनी तंग और गन्दी थी कि इसमें शायद ही किसी भले आदमी का कभी गुजर होता होगा। दोनों तरफ के ऊंचे ऊँचे मकानों की बदौलत इसमें कभी से अंधेरा छाया हुआ था पर रघुबीरसिंह बेखौफ इसके अन्दर घुस गये। कुछ दूर जाने बाद वे एक दर्वाजे के सामने पहुंच कर खड़े हुए मगर पल्ले को धक्का देने से वह अन्दर से बन्द मालूम हुआ अस्तु वे वहाँ और न रुके तथा आगे बढ़ कर उस खंडहर के पास हो गये जो उस मकान के दाहिनी तरफ और उसके साथ ही सटा हुआ पड़ता था। गहरी निगाहों से इधर उधर देखने के बाद वे इसके अदर घुस गये और एक टूटे फूटे छप्पड़ के पास पहुंच कर खड़े हुए। एक बार फिर बड़े गौर से उन्होंने अपने चारो तरफ देखा और तब धीरे से ताली बजाई। जवाब में तुरत ही कहीं से चुटकी बजने की आवाज आई और साथ ही बगल की झाड़ी के अन्दर से एक आदमी ने अपना सिर बाहर निकाला।

रघुबीरसिंह को देख इस आदमी ने हाथ से कुछ इशारा किया और रघुबीरसिंह ने भी उसका कोई जवाब इशारे ही में दिया। वह आदमी वह इशारा देख झाड़ो के बाहर निकल इनके पास आ गया और इन्होंने उससे धीरे से पूछा, "कहो क्या हाल चाल है?"

आदमी०। बेढब हाल है। सैकड़ों ही तलवारें लाठियां और गड़ांसे इकट्ठे हो चुके हैं और न जाने कहां कहां से बराबर चले ही आ रहे हैं। कुछ पिस्तौल और बन्दूकें भी आ गई हैं और शीघ्र ही औरों के आने की संभावना है। जान पड़ता है कुछ ही समय बाद यह मकान पूरा एक किला हो जायगा।

रघुबीर०। इसका भी कुछ पता लगा कि यह सब सामान किस इरादे से इकट्ठा किया जा रहा है?

आदमी०। ठीक ठीक तो नहीं पता चला पर मालूम होता है इसी झगडे के सिलसिले में इनसे काम लिया जायगा। यह सब कुछ शायद सिखों में बांट दिया जायगा और तब किसी दिन उन्हीं की तरफ से हिन्दुओं पर आजमाया जायगा।

रघुबीर०। क्या इसमें रहने वाले सब सिख ही हैं?

आदमी०। नहीं नहीं, इसमें तो हिन्दू मुसलमान जाट सिख ईसाई पारसी सभी हैं और विचित्रता तो यह है कि उनमें पूरा मेल है, फिर भी न जाने क्यों वे इन दोनों जातियों हिन्दू और सिखों को आपस में लड़ाने का इन्तजाम कर रहे हैं।

रघुबीर०। इसका मतलब क्या हो सकता है?

आदमी०। कुछ समझ में नहीं आता पर कुछ न कुछ संगीन मामला जरूर है।

रघुवीर०। तुम इस मकान के अन्दर भी गये हो ?

आदमी०। नही, कई बार कोशिश की मगर एक दफे भी सफल न हो सका।

रघुवीर०। मैं इसके अन्दर जाना चाहता हूँ।

आदमी०। नही नहीं, ऐसा सोचिये भी नहीं, वे सब बड़े ही धूर्त और होशियार है, हमेशा चौकन्ने रहते है, साथ ही साथ खूंखार भी इतने हैं कि किसी को जान ले लेना तो कुछ समझते ही नही, न जाने कब क्या कर बैठें।

रघुवीर०। दुत डरपाक, इसी हिम्मत पर जासूस बनना चाहता है !

आदमी०। (कुछ तन कर) जी नहीं, यह सवाल हिम्मत और चालाकी का नहीं अक्ल का है। ऐसा करना जान बूझ कर फांसी लगा लेना होगा। मैं इन लोगों का रंग ढङ्ग कई दिनों से देख रहा हूँ और इसी से ऐसी बात कहता हूँ।

रघुवीर०। खैर जो होगा देखा जायगा। तुम बताओ कि इस मकान के अन्दर जाने का इस तरफ से कोई रास्ता कहीं से मिल सकता है ?

आदमी०। (चमक कर) क्या आप सचमुच ही इसके अन्दर जाना चाहते हैं ?

रघुवीर०। हाँ एक दम सचमुच।

आदमी०। मै एक बार फिर.........

रघुबीर०। मैंने तुम्हारी बाते अच्छी तरह सुन लीं, अब फजूल वक्त बरबाद न करो और जो कुछे मैंने पूछा है उसका जवाब दो।

आदमी०। (सिर झुका कर) अच्छा तो फिर इधर आइये और कोशिश कर के देखिये।

वह आदमी आगे हुआ और कई कदम जाने के बाद एक घनी झाड़ी के अन्दर घुसा जो उस बड़े मकान की दीवार के साथ सटी हुई और इतनी फैलावदार तथा गुञ्जान थी कि उसके अन्दर छिपे हुए दो चार आदमियों को कोई सहज में बाहर से देख नहीं सकता था। रघुबीरसिंह भी उस आदमी के पीछे पीछे इस झाड़ी के पास पहुँचे। उनका साथी कुछ डालियाँ हटा कर झाड़ी के अन्दर घुस गया और रघुबीरसिंह के भी अन्दर आ चुकने पर डालियों को ज्यों का त्यों गिरा कर आड़ कर लेने बाद धीरे धीरे कहने लगा—

आदमी०। बेकारी को हालत में बैठे बैठे मैंने यहाँ इस जगह एक सुरंग जैसी चीज खोद डाली है। मकान के इस हिस्से की दीवार बहुत पुरानी होने के कारण कमजोर थी और मोटाई भी अधिक न थी इस कारण मुझे बहुत कुछ सफलता मिल गई है और लगभग तीन चौथाई के रास्ता बन गया है। कुछ ईंटें और हटाने से ही दीवार के आर पार छेद हो जायगा, मगर मैं इस विषय में कुछ नहीं कह सकता कि यह रास्ता कहाँ पर

निकलेगा या इसके खुल जाने पर क्या कुछ न हो जायगा।

रघुबीर०। खैर कोई हर्ज नहीं, तुम जरा हटो और मुझे जांचने दो।

वह आदमी एक बगल को हो गया और रघुबीरसिंह को सामने वाली दीवार की जड में किसी जानवर की मांद जैसा एक गडहा दिखाई पड़ा जो लगभग सवा हाथ के पेटे में होगा। मकान के इस हिस्से की दीवार नोना लग कर बिल्कुल ही गल गई थी और जोड़ाई भी मजबूत न थी। रघुबीरसिंह के जरा ही सी चेष्टा करने से दो एक इटें और खसक कर गिरीं जिन्हें उन्होने बड़ी फुरती के साथ जमीन पर गिरने या आवाज करने से रोका और तब धीरे-धीरे करके और एक एक ईंट खसका खसका कर वे उस सींध को बड़ा करने लगे। थोड़ी देर में और भी कई ईंटे अलग हो गईं और तब एक छोटी ईंट निकलने के साथ ही रघुबीरसिंह को मालूम हो गया कि दीवार में आर पार छेद हो गया है।

अब वे रुक गये और उस एक ईंट के निकल जाने के कारण बन गए हुए छेद में ही कान लगा कर गौर से सुनने लगे। अन्दर से किसी तरह की भी आहट नहीं आ रही थी मगर एक खास तरह की बू और गर्म हवा जरूर बाहर निकल रही थी जिसने उन्हें बता दिया कि यह शायद किसी तहखाने या बंद कोठरी की हवा है। अच्छी तरह इतमीनान कर लेने पर उन्होंने दो चार ईंटें और भी निकालीं और बांह जाने लायक छेद बना

कर अपना पंजा उसके अन्दर डाला। इधर उधर की नम दीवार टटोलने के बाद जब उन्होंने हाथ को ऊपर की तरफ ऊँचा किया तो तुरत ही वह छत के साथ लग गया जिससे उनका यह सन्देह पुष्ट हो गया कि यह कोई जमींदोज तहखाना है जिसकी छत के नजदीक उनकी यह सेंध खुली है।

कुछ ईंटें और निकाली गईं जिससे सिर घसाने लायक छेद हो गया। अब जमीन पर लेट कर रघुबीरसिंह ने अपना सिर उस छेद के अंदर डाल दिया और इधर उधर निगाह घुमाने के साथ ही एक विचित्र तमाशा देखा।

(४)

अमरसिंह और लक्ष्मीकान्त ने चीफ कमिश्नर के बंगले के पास पहुंच कर अपनी अपनी गठड़ी उतारी और आड़ की एक जगह में बैठ उन्हें खोल डाला।

बहुत से मैले और पुराने कपड़ों और कागजों से दोनों गठरियाँ भरी हुई थीं। दोनों ने इन्हें अलग किया और तब एक एक थैली बाहर निकाली जिसमें आटा दाल सत्तू मसाला आदि बंधा हुआ था। एक थैली में हाथ डाल और आंटे दाल आदि के बीच में से टटोल कर लक्ष्मीकान्त ने एक चमकदार छोटी पिस्तौल निकाली और अमरसिंह ने ऐसी ही एक दूसरी थैली में से तीन गोले निकाले जो ठीक क्रिकेट खेलने के गेंदों की तरह थे यहाँ तक कि इन पर उसी तरह का लाल चमड़ा भी सीया हुआ था, परन्तु हम बखूबी जानते हैं कि ये रक्त-मंडल के ईजाद

किये हुए वे भयानक बम थे जिनके जोड़ के अभी तक कहीं बने नहीं। इनमें से एक के भी फूटने पर पचास गज के भीतर कोई चीज खड़ी नहीं रह सकती थी और केवल जोर से पटक देना ही इनको भभका या फोड़ देने के लिये काफी था।

दोनों ने बड़े गौर से इन पिस्तौल और बमों को देखा। पिस्तौल में सात गोलियाँ भरी हुई थी और बम भी बिल्कुल दुरुस्त थे, केवल वे कांटियाँ उनकी अभी तक यथास्थान थी जिनके एक बार दबा देने मात्र से ही ये इस योग्य होते थे कि पटकने से भभक पड़ें। जब तक ये कांटियां दबा नहीं दी जाती थीं तब तक इन बमो के फूटने की संभावना बहुत ही कम रहती थी।

अमरसिंह ने लक्ष्मीकान्त से कहा, "अब हम दोनों को अपना अपना काम बाँट लेना चाहिये। तुम किसको लेते हो— चीफ कमिश्नर को या फतहउद्दीन को?"

लक्ष्मी०। तुम कमिश्नर को मेरे हवाले करो।

अमर०। अच्छी बात है, तो मैं फतहउद्दीन पर यह बम आजमाऊँगा। जहाँ तक मैं समझता हूँ इस समय कमिश्नर कचहरी जाने की तैयारी में होगा और फतहउद्दीन अपने मकान में......।

यकायक पीछे की तरफ से कुछ आहट सी मालूम हुई। अमरसिंह ने चौंक कर सिर घुमाया पर कहीं कोई दिखाई न पड़ा। अपना संदेह समझ वह पुनः कहने लगा—"तो मैं फतह-

उद्दीन के घर जाता हूँ और तुम कमिश्नर की तरफ जाओ, मगर इतना ख्याल रखना कि अगर तुम अपने काम में असफल हुए या सफल हो कर भी भाग न सके तो जीते रह कर कैदी होने की बनिस्बत जान दे देना ही अच्छा होगा। कौन ठिकाना तरह तरह के जुल्मों में पड़ कर मजबूरी की हालत में मंडल का कौन सा भेद कभी तुम्हारे मुंह से निकल जाय जिसके लिये पीछे पछताना पड़े !"

लक्ष्मीकान्त ने सिर झुकाये हुए कहा, "मैं यह बात बखूबी समझता हूँ। तुम बेफिक्र रहो, जान का मोह अब मुझे रत्ती भर भी नहीं है, तुम अपनी फिक्र करो।"

अमर। (हंस कर) मेरी तो बात ही न करो, मैं तो अपनी जान देकर भी अगर इन कम्बख्त सरकारी ओहदेदारों या जासूसों में से किसी एक को भी जान ले सकूंगा तो अपने को भाग्यवान समझूंगा।

लक्ष्मी०। हां तुम्हारी तो यह प्रतिज्ञा ही है, अच्छा तो अब देर करने से क्या लाभ ?

दोनों दोस्तों ने अपने अपने शस्त्र अपनी देहाती भारी पगड़ियों के अंदर छिपाये और गठड़ियों को फिर पहिले की तरह बांध डाला, इसके बाद दोनों एक दूसरे के गले मिले। अमरसिंह ने प्यारे भाई की तरह लक्ष्मीकान्त को कलेजे से लगाया। जब दोनों अलग हुए तो लक्ष्मीकान्त की आंखों मे आंसू भरे हुए थे पर अमरसिंह को अपने दिल पर इतना काबू था कि उसकी

आंखें बिलकुल सूखी थीं। दोनों ने फिर कुछ बातें कीं और तब पहिले की तरह अपनी अपनी लकड़ियों पर अपनी अपनी गठड़ियां टांगे दोनों दो तरफ को रवाना हो गये। लक्ष्मीकान्त बराबर पीछे घूम घूम कर अमरसिंह की तरफ देखता जाता था पर बहादुर अमर जिसने सब माया ममता मोह और प्रेम को अपने जीवन के साथ साथ ही मातृभूमि के चरणों पर चढ़ा दिया था केवल जमीन की तरफ देखता रास्ते पर चला जा रहा था। उसने एक बार भी पीछे घूम कर न देखा और एक दफे भी अपने नये मगर बहुत ही जल्दी जान से प्यारे बन गए हुए दोस्त लक्ष्मीकान्त के लिए आह भी न भरी जिसको अब पुनः कभी जीता जागता देखेगा या नहीं इसके बारे में वह कुछ भी नहीं जानता था।

इन दोनों के जाते ही पास वाले नीम के मोटे पेड़ को बहुत ऊपर वाली एक मोटी डाल पर लेटा हुआ एक आदमी नीचे उतरा। एक बार उसने अमरसिंह की ओर देखा और दू री बार लक्ष्मीकान्त की ओर, और तब बेतहाशा दौड़ता हुआ कमिश्नर साहब के बंगले की तरफ भागा।

(५)

अनपढ़ देहाती की तरह छोटे छोटे और जल्दी जल्दी पैर मारता तथा धूल उड़ाता हुआ लक्ष्मीकान्त इस प्रकार चीफ कमिश्नर साहब के बंगले की तरफ बढ़ रहा था मानो वह बम या पिस्तौल का नाम भी नहीं जानता, 'क्रान्ति' शब्द का अर्थ

जानना तो बहुत दूर, परन्तु इसमें सन्देह नहीं कि उसका दिल भीतर ही भीतर बड़े जोर से धड़क रहा था।

बंगला वहाँ से बहुत दूर न था अस्तु लगभग दस मिनट में ही वह उसके फाटक के सामने पहुंच गया। जैसे बहुत ही ज्यादा थक गया हो इस प्रकार अपनी गठड़ी पीठ पर से उतार जमीन पर रख वह फाटक के बगल में खड़ा हो गया और पैर को धूल झाड़ने बाद अंगड़ाई लेने लगा। इसी समय उसने एक मेहतर को देखा जो सिर पर मैले का डोल धरे और एक बगल मे झाड़ू तथा दूसरी में टोकरी दबाये फाटक के अन्दर घुस रहा था। लक्ष्मीकान्त ने उसे रोक देहाती भाषा में उससे पूछा, "काहे भइया, मजिहटर साहब क कोठी इहवे हो ?"

मेहतर ने गौर से इसकी तरफ देखा और तब कहा, "नही यह चोफ कमिश्नर साहब का बंगला है, मजिस्ट्रेट साहब सदर मे रहते हैं।"

कहते हुए मेहतर ने अपनी बाईं आँख की पलक तीन दफे और उसके बाद दाहिनी आँख की एक दफे दबाई। यह रक्त-मंडल का गुप्त इशारा था और इसी के द्वारा उसके सदस्य एक दूसरे को अपना परिचय देते थे। मेहतर का यह इशारा देखते ही लक्ष्मीकान्त चौंका और उसने अपने बाएं हाथ को छाती पर ले जाकर उंगलियां इकट्ठी कर मामूली तरह पर एक कमल की सी आकृति बनाई। यह दूसरा इशारा था और इसके जवाब में उस मेहतर के अपनी छाती पर एक गोल निशान बनाते ही

लक्ष्मीकान्त को विश्वास हो गया कि यह वास्तव में कोई मेहतर नहीं है बल्कि किसी भले घर का लड़का और रक्त-मंडल का उच्च स्तर का सदस्य है जो मातृ-भूमि के लिए मैला उठाने का काम करने में भी नहीं हिचकता।

इसके बाद दो तीन इशारे दोनों में और भी हुए और तब उस मेहतर नें चारो तरफ देख जमीन पर झाडू देते देते लक्ष्मीकान्त से कहा, "इस चारदीवारी के साथ साथ पूरब तरफ चले जाओ। मोड़ घूमने पर एक छोटा दर्वाजा और अन्दर एक झोपड़ा दिखाई पडेगा। वह मेहतर की कोठड़ी है, वहीं दर्वाजे के पास ही बैठ जाना।'

कह कर मेहतर अपनी झाडू टोकरी आदि सम्हालता फाटक के अन्दर घुस गया और हमारा यह देहाती नौजवान लक्ष्मीकांत अपना सामान उठाये पूरब तरफ रवाना हुआ। थोड़ी देर बाद जब लक्ष्मीकान्त उस दर्वाजे के पास पहुंचा तो उसने दर्वाजे को जरा सा खुला हुआ और मेहतर को झोपड़े के भीतर खड़े पाया जिसने इसको देखते ही अन्दर बुला तुरन्त ही वह दर्वाजा बन्द कर लिया।

यद्यपि यह मेहतर का स्थान था फिर भी कितना साफ था! बाहर की जमीन का एक हिस्सा बाँस की जाफरी द्वारा अलग कर दिया गया था और उस पर एक प्रकार की घनी लता चढ़ी रहने के कारण यह जगह बिल्कुल आड़ में हो गई थी। यहाँ से कमिश्नर साहब का बंगला नहीं दिखाई पड़ता था और न बंगले

से यह जगह ही दिखाई पड़ती थी। आस पास दूर दूर तक फैले झाड़झंखाड़ के कारण बंगले में रहने वाला कोई इधर कभी आता भो न था और इस कारण यह स्थान और भी एकान्त रहा करता था।

मेहतर ने झोपडे के बाहर निकल बड़े गौर से चारो तरफ देखा और जब अच्छो तरह विश्वास कर लिया कि कही कोई नहीं है तो अपने झोपड़े के अन्दर वाली एक अन्य कोठरो के दर्वाजे का ताला खोला। पल्ला खोल उसने लक्ष्मीकान्त को भीतर जाने को कहा और आप पीछे हट गया। तब इसने अपने झोपड़े का दर्वाजा भीतर से मजबूत बन्द कर लिया।

कोठरी के अन्दर घुस लक्ष्मीकान्त ने देखा कि वह वहाँ अकेला नहीं है बल्कि रक्त-मंडल के दो और भी सदस्य उस जगह बैठे हुए हैं। इसो समय वह मेहतर भो यहां आ गया जिसने इस कोठरी के दर्वाजे को भी अन्दर से मजबूत बन्द कर लिया।

(६)

सेंध में सिर डाल रघबीरसिंह अन्दर का हाल देखने लगे।

छोटा जमींदोज तहखाना एक दम अंधेरा था मगर सामने की तरफ जरा हट कर एक खुला दरवाजा था जिसके बाद दूर तक फैला हुआ एक बहुत लम्बा चौड़ा दालान नजर आ रहा था। इस समय इस दालान में कई मशाले जलते रहने के कारण यहाँ काफी चांदनी हो रहा था। दालान में एक तरफ एक छोटा

चबूतरा बना हुआ था जिस पर कोई मूर्ति खड़ी थी। मूर्ति के सामने काठ का एक बड़ा पटरा बिछा था जिस पर बीच में एक नरमुन्ड था और उसके पीछे एक ताजा कटा हुआ भैंसे का सिर रक्खा हुआ था। सिर से निकले खून से वह समूचा स्थान तथा नीचे की जमीन भी तर हो रही थी।

मूर्ति के सामने की तरफ दो तीन हाथ जगह छोड़ कर लाल कपड़े पहिने हुए तीस पैंतीस मनुष्य बैठे हुए थे जिनके मुंह भी लाल कपड़ों से ढके हुए थे, केवल एक आदमी का मुंह खुला था जिसने अपनी लाल नकाब पीछे की तरफ उलट दी थी और मूर्ति के एक बगल में खड़ा कुछ कह रहा था। फासला बहुत होने के अलावे वहाँ मशालों की इतनी अधिक रोशनी भी न थी कि पूरा दालान रौशन हो जाता, दूसरे इस आदमी की पीठ मशालों की तरफ पड़ती थी जिससे बहुत कोशिश करने पर भी रघुबीर-सिंह उसकी सूरत देख या उसे पहिचान न सके, अस्तु वे चुपचाप उसकी बातें सुनने की कोशिश में लगे जो कुछ देर के बाद हलकी हलकी सुनाई पड़ने लगी। वह कह रहा था—

"भाइयों, इधर दस बारह दिनों में जो कुछ घटनायें हो चुकी हैं उन्होंने बतला दिया है कि हम लोगों की शक्ति कितनी है। इस नगर की जनसख्या के आठ हिस्सों में तीन हिस्से मुसलमान है—दो हिस्से सिख दो हिस्से हिन्दू तथा बाकी के एक हिस्से मे और सब जाति के लोग हैं इस प्रकार जिनका हिस्सा सब से ज्यादा है, समझना पड़ेगा कि स्वतन्त्रता के युद्ध में सब से बड़ा

भाग भी उनको ही लेना चाहिए पर उन्होंने अपने को इस आन्दोलन से एक दम अलग रख छोड़ा है जैसा कि सभी लोगों पर जाहिर भी हो चुका है। बाकी के लोगों में हमने जो दङ्गा खड़ा कर दिया है उसके फलस्वरूप हिन्दुओं ने सिखों को ऐसा मारा कि आज किसी सिख की घर से बाहर निकलने की हिम्मत नहीं पड़ रही है। अस्तु प्रगट हो गया कि यदि कभी हम लोगों को सशस्त्र विद्रोह करना पड़ गया तो हमारा एक मुख्य अंश समय पर अवश्य ही पीठ दिखा देगा उस हालत में बाकी के अंश चाहे कितना भी जोर लगालें पर कुछ अधिक कर न सकेंगे, अस्तु हम लोगों का कर्तव्य है कि पहले बहुसंख्यकों को अपने आन्दोलन का भागी और साथ ही बलवान बनावें। इसके कई उपाय सोचे गये हैं पर अभी तक सब तरह के दोषों से एक दम मुक्त कोई भी उपाय नजर नही पड़ा, फिर भी इस समय काम चलाने के लिए रक्त-मंडल के 'भयानक-चार' ने यह उपाय बतलाया है—

'भयानक-चार' का नाम सुनते ही रघुबीरसिंह चौक पड़े। कई बार पहिले भी यह नाम वे सुन चुके थे और इसकी भयानकता से भी बहुत कुछ परिचित हो चुके थे। इस जगह यह नाम सुन उन्हें आश्चर्य नहीं हुआ बल्कि वे और भी गौर के साथ सुनने लगे। जरा सा रुक कर वह आदमी फिर कहने लगा—

"'भयानक-चार' ने निश्चय किया है कि इस प्रान्त के मुख्य निवासी अर्थात् मुसलमानों में जोश और ताकत लाने के लिये

यह जरूरी है कि हम लोगों में से दस आदमी अपनी अपनी जानो की बलि देने पर तैयार हो जायं। ये दसो अपने भेष बदल और पांच-पांच के दो दल बना कर मुसलमानी महल्लों में घुस जायं और भयानक मारकाट शुरू कर दें, यही नहीं आवश्यकता देखे तो आपस में लड़ते हुए वहीं पर मर भी जायं। इसके फलस्वरूप जरूर ही अन्य लोगों में भी जोश आवेगा और वे भी लड़ना शुरू कर देंगे जिससे खून खरावा मचेगा, दस पांच जानें जायंगी पर उनकी दिली ताकतें बढ़ेंगी। मुर्दा लोगों में दम लाने का दूसरा उपाय इस समय और कोई दिखाई नहीं पड़ता। वोलिये, क्या आप लोगों को यह उपाय पसंद है?"

धीमी मगर मजबूत आवाजें उठीं—"आप जो कुछ कहें हमें वह सब मंजूर है!" जिस पर वह बोला, "तब आप लोगों में से दस आदमी अपनी जानें देने के लिए तत्पर हो जाइये, बताइये कौन कौन आगे आता है?"

जितने वहां बैठे थे सभी उछल कर खडे हो गये। यह देख वह हंसा और बोला, "आपके देशाभिमान पर मुझे गर्व है, आप इस देश के सच्चे सपूत हैं। खैर मै आपमें से दस आदमी चुन लूंगा। अब मुझे सिर्फ दो बातें और बतानी हैं—एक तो इस कारंवाई का समय और दूसरा स्थान। इसमें से समय तो परसों शाम का मुकर्रर किया गया है जब कि अधिकांश नगर-निवासी 'बावन वीर' के मेले में गये होंगे, और स्थान लाल मसजिद मुकर्रर की गई है जो अमीरों का मुहल्ला है।

यों तो आप सभी लोग सब तरह से लैस होकर शाम को चार बजे उस मसजिद के आस पास की गलियों में मौजूद रहें और जैसे ही इशारा हो बाहर निकल आवें, पर उस समय किसको कैसे और क्या करना होगा यह मैं आप में से जिन्हें चुनूंगा उन्हें अलग अलग बताऊंगा।"

इतना कह वह आदमी कुछ देर के लिए रुका और तब बोला, "एक बात और मुझे कहनी है। यह आम शिकायत 'भयानक-चार' ने सुनी है कि जनता के पास हथियार नहीं हैं। अस्तु आज की रात, कल का दिन और रात, तथा परसों के दिन भर में, जहाँ तक हो अधिक लोगों में हथियार बांटने चाहिएं, अवश्य ही बड़ी ही गुप्त रीति से। इस समय इस मकान में काफी हथियार मौजूद हैं जिनका बराबर-बराबर चार भाग कर के मुसलमान, हिन्दू, सिख और अन्य जातियों में बाँट दिया जाना चाहिए। बस मुझे इतना ही कहना था।"

कह कर उस आदमी ने अपना सिर झुकाया और तब वह उस मूर्ति तथा नर-कपाल को प्रणाम कर वहाँ से कहीं हट गया और उसके जाने बाद बाकी के सब लोग भी एक एक कर उस जगह के बाहर होने लगे।

रघुबीरसिंह ने भी अब अपना सिर सेंध से बाहर निकाल लिया और अपने साथी की तरफ देखा जो उनके पास ही बैठा भीतर का हाल कुछ भी देख न सकने के कारण जानने के लिए व्यग्र हो रहा था। रघुबीरसिंह ने सब से पहिले तो उस सेंध से

निकली ईंटों को पुनः वहीं लगा कर छेद बन्द कर दिया और तब जो कुछ देखा था संक्षेप में अपने साथी को बताने के बाद कहा, "जरूर यह आदमी उस 'भयानक-चार' में से ही कोई है। इसकी सूरत शक्ल और पौशाक मैं बताता हूँ, खूब गौर से सुन लो और यह जब उस मकान के बाहर निकले तो छिपे हुए इसका पीछा करके देखो कि कहाँ जाता या क्या करता है। इसके अड्डे का पता लगा कर तुम उसी मामूली ठिकाने पर पहुंचो और मैं भी थोड़ी देर और इनका रंग ढग देखने बाद वहां पहुंचता हूँ। पर देखो, इतना बताए देता हूँ कि उसका पीछा बड़ी होशियारी से करना। ये सब लोग बड़े खूंखार हैं और अपनी जान देना या दूसरे की ले लेना कुछ भी नहीं समझते!"

उस आदमी ने कहा, "आप बेफिक्र रहिये, मैं खूब होशियार रहूँगा।" कुछ देर तक रघुबीरसिंह उसे और भी कई तरह की बातें समझाते रहे जिसे सुन लेने के बाद वह झाड़ी से बाहर निकल किसी तरफ को चला गया। रघुबीरसिंह थोड़ी देर तक वहीं रुके कुछ सोचते विचारते रहे, तब वे भी झाड़ी के बाहर निकले और एक तरफ को रवाना हो गये।

—:o:—

चौथा बयान

लक्ष्मीकान्त को चीफ कमिश्नर के बंगले की तरफ भेजने बाद अमरसिंह प्रसिद्ध जासूस फतेहउद्दीन के मकान की तरफ चला।

फतेहउद्दीन का मकान शहर के पूरब तरफ की उस घनी बस्ती में था जिसमें अधिकतर गरीबों और मजदूरी-पेशे वालों का ही रहना होता था। उधर के प्रायः सभी मकान कच्चे और खपरैल के अथवा टूटे फूटे थे और गलियां भी प्रायः तंग और बदबूदार थीं। न जाने क्यों इस मशहूर जासूस ने अपने रहने के लिये यह मुहल्ला चुना था पर इसमें शक नहीं कि जिस मकान में वह रहता था वह अपेक्षाकृत बडा और साफ सुथरा था और इसमें वह अपने कई अनुयाइयों और नौकरों के साथ रहता था। हम नहीं कह सकते कि उसके कोई जोरू जांता या बेटा बेटी भी थी या नहीं क्योंकि इस मकान में उसके संगी साथियों के सिवाय और कोई कभी दिखाई नहीं पड़ता था। यह भी मुमकिन है कि किसी दूसरी जगह उसका कोई और भी रहने का इन्तजाम या घर-द्वार आदि हो।

मालूम होता है कि अमरसिंह को फतेहउद्दीन के रहन सहन आदि का पूरा हाल मालूम था, क्योंकि बहुत सी पेचीली और तंग गलियों को तेजी के साथ पार करता हुआ आधे घंटे के अन्दर ही वह फतेहउद्दीन के मकान के पास जा पहुँचा। यहाँ

उसने अपनी चाल धीमी कर दी और उसके मकान की तरफ न जा बगल की एक गली में घुस गया जिसके अन्दर कई कच्चे मकान और कुछ अहीरों के अराड़ थे। कई मकानों को लांघते और एक मोड़ घूमने के बाद वह एक अधगिरे मकान के दरवाजे पर पहुंच कर रुका और गौर से चारो तरफ देख सब तरफ सन्नाटा पाने के बाद इसके दर्वाजे का कुन्डा धीरे धीरे खटखटाने लगा। जवाब में भीतर से खांसने की आवाज आई और थोड़ी ही देर बाद किसी ने दरवाजा खोला। अमरसिंह भीतर चला गया और दरवाजा तुरत ही पुनः बन्द हो गया।

दरवाजा खोलने वाला छब्बीस या सत्ताईस बरस का एक नौजवान था जिसने अमरसिंह को पहिचान बड़े प्यार से गले लगाया और तब अपनी कोठड़ी मे ले जा कर फर्श पर बैठाया। इसके बाद थोड़ी देर के लिए वह कहीं बाहर चला गया। लगभग आधी घड़ी के बाद वह लौटा और अमरसिंह के पास आकर बैठ गया।

नौजवान०। कहिये क्या खबर है?

अमर०। ठीक ही है, 'भयानक-चार' ने आज फतेहउद्दीन का काम तमाम करने का निश्चय किया और उनकी तरफ से मैं इस काम पर मुकर्रर किया गया हूँ।

नौजवान०। हां!

अमर०। हां, तुमने सब इन्तजाम कर रक्खा है?

नौज०। हाँ सब कुछ तैयार है। जैसा जैसा आपने कहा था

वैसा वैसा सब प्रबन्ध कर लिया गया है। आपने कब यह काम करने का निश्चय किया है?

अमर०। बस आज ही, बल्कि हो सके तो अभी ही। मैं सब तरह से तैयार होकर आया हूं और मौका पाते ही उस शैतान का काम तमाम कर देना चाहता हूँ।

नौज०। अच्छी बात है, मैं भी चाहता हूँ कि वह कम्बख्त जहाँ तक जल्दी हो इस दुनिया से उठा दिया जाय। उसने बहुत बड़ा अंधेर मचा रक्खा है और चीफ कमिश्नर साहब की तो वह नाक का बाल हो रहा है। वह जैसा और जो कुछ कहता है वैसा ही और वही वे करते हैं।

अमर०। उनका भी बन्दोबस्त हो चुका है। आज ही किसी समय शायद वे भी इस दुनिया से उठा दिये जायं।

नौज०। अच्छा! तब तो एक साथ ही दो पापी इस दुनिया से दूर हो जायेंगे। इधर का जो नया हाल मैंने 'मंडल' में कहला भेजा था वह तो आपने भी सुना ही होगा?

अमर०। नही, वह कौन सा हाल? मैं आज कई रोज से बाहर बाहर ही घूमता रहा हूँ इससे उधर का कोई हाल मुझे नही मालूम हुआ।

नौज०। आपको नही मालूम? अच्छा तो फिर सुनिये मैं बताता हूँ।

कह कर नौजवान अमरसिंह के पास खसक आया और तब धीरे से उसने कोई ऐसी बात उसके कान में कही जिसे सुनते

ही वह एकदम चौक पड़ा।

मगर तुरत ही अमरसिंह ने अपने को सम्हाला और तब इन दोनों में इतने धीरे धीरे बातें होने लगीं कि उन्हें हम भी न सुन सके। काफी देर तक दोनों की बातें चलती रहीं और तब दोनों आदमी कोठड़ी के बाहर निकले।

बाहर आ अमरसिंह ने एक लम्बी साँस लेकर कहा, 'तुमने ऐसी खबर सुनाई जिसने मेरा कलेजा दहला दिया। ऐसे ऐसे आदमी जिस देश में हों समझ लेना चाहिये कि वह पराधीन रहने के लिये बनाया ही गया है और कभी स्वतन्त्र नहीं हो सकता। मालूम नही परमात्मा ऐसे आदमियों को पैदा क्यों करता है!"

नौजवान हंस कर बोला, 'खैर पैदा करना उसके हाथ में है तो मारना तो हमारे हाथ में है! ऐसों को दुनिया के पर्दे से उठा देना ही पुण्य है।"

अमर०। अच्छा जाने दो, 'भयानक-चार' इस मामले पर आप ही गौर करेगा और दोषी का पता लगावेगा। हमें अपने काम की फिक्र करनी चाहिये। अच्छा वह खिड़की है कौन सी?

नौजवान०। इधर आइये, मैं दिखाता हूँ।

कह कर नौजवान अमरसिंह को एक दूसरी कोठड़ी के अन्दर ले गया। इसकी बगली दीवार में एक बहुत ही छोटी सी खिडकी बनी हुई थी जो इस समय बन्द थी। नौजवान ने उसे खोला और दोनों आदमी बड़ी कठिनता से उसकी राह दूसरी तरफ को

निकले। एक पतला गली की तरह का तंग रास्ता था जिसमें अमरसिंह ने अपने को पाया। वास्तव में यह दोनों तरफ के मकानों का गन्दा पानी निकल जाने के लिये बनी एक चौड़ी मोरी मात्र थी जिसके दोनों तरफ डेढ़ डेढ़ दो दो बालिश्त जगह छूटी रहने तथा ऊपर से दोनों तरफ के मकानों की छजलियों की छाया रहने के कारण यह एक अंधेरी सुरंग की तरह मालूम पड़ रही थी। नौजवान ने हाथ का इशारा करके कहा, 'यही सामने वाला दीवार उसके मकान की पिछली दीवार है और वह देखिये वह खिड़की है जिसका मैंने जिक्र किया।"

अमर०। चारो तरफ देख कर) यह राह क्या किसी तरफ को निकल गई है या दोनों तरफ से बन्द है ?

नौज०। इधर पूरब की तरफ से तो यह बन्द है पर उधर पश्चिम की तरफ से खुली है। इन दोनों तरफ वाले मकानों का गन्दा पानी निकलने की यही राह है और ढाल पश्चिम की ही तरफ है इसलिए यह उधर से खुली है मगर उधर से कोई सहज में यहां आ नहीं सकता क्योंकि आगे जाकर यह नाली सड़क के बड़े परनाले में मिल गई है जिस पर एक पुल को तरह बना हुआ है पर कोई रास्ता नहीं है और इसी कारण कोई उधर से यहाँ आ नहीं सकता, फिर भी जरूरत के वक्त या जान बचाने के लिए भाग निकलने वास्ते यह राह जरूर बहुत अच्छी है।

अमर०। ठीक है मैं समझ गया, अच्छा वह खिड़की जो

तुमने दिखाई, सो फतहउद्दीन के मकान के अन्दर किस जगह पड़ती है ?

नौज०। वहां की एक भीतरी कोठड़ी में पड़ती है। फतह-उद्दीन को जब कोई बहुत ही गुप्त सलाह बात करनी होती है तब वह इसी कोठड़ी में आ बैठता है मगर इस खिड़की को वह हमेशा बन्द ही रखता हैं। मौके पर काम आने के लिए मैंने इसके पल्ले में दो एक छेद बना रक्खे हैं जिनमें आंख लगा कर देखने से भीतर का हाल बखूबी दिखाई दे सकता है।

अमर०। यह बहुत अच्छा किया; मैं उन्ही से काम लूंगा और देखूंगा कि इस वक्त वह शैतान वहां है या नही, मगर तुम बाहर जाकर बैठो, अगर कोई खतरा दिखाई पड़े तो मुझे खबर देना और मौके पर वैसी ही कारंवाई करना जैसी तुम्हें बता चुका हूं।

"बहुत अच्छा" कह नौजवान अपने मकान के अन्दर लौट गया और अमरसिंह उस खिड़की की तरफ बढ़ा जो जासूस के मकान में पड़ती थी। बहुत ही होशियारी से पैर दबा दबा कर चलता हुआ वह उसके पास पहुंचा और उन छेदों की तलाश करने लगा जिनका जिक्र नौजवान ने किया था। कुछ ही देर में उसने उनका पता लगा लिया जो भीतर से नजर न आये शायद इसी खयाल से मैली रूई ठूंस कर बन्द किये हुए थे। एक जगह से अमरसिंह ने रूई निकाल ली और अपनी आंख उस छेद में लगाई।

अमरसिंह ने देखा कि लगभग आठ हाथ चौड़ी और कोई दस ग्यारह हाथ लम्बी एक कोठड़ी है जिसमें दक्खिन तरफ तो ऊंची चौकी पर फर्श बिछा हुआ तथा बहुत से कागज पत्र फैले हुए हैं तथा उत्तर तरफ एक टेबुल रखा हुआ था जिसके चारो तरफ पांच छः कुर्सियां पड़ी हुई हैं। इस कोठरी के दूसरी ओर शायद इस मकान का आंगन पड़ता था क्योंकि उधर दो बड़ी खिड़कियाँ थी जिनमें छड़ लगे हुए थे। ये दोनों खिड़कियाँ इस समय खुली हुई थीं और इनकी राह कोठड़ी में काफी चांदना आ रहा था जिससे यहां की हर एक चीज साफ साफ दिखाई पड़ रही थी, मगर इसका दरवाजा जो एक ही था इस समय दूसरी ओर से बन्द था और कोठड़ी में कोई था नहीं।

उन बड़ी खिड़कियों की राह आंगन का भी एक हिस्सा दिखाई पड़ रहा था जिससे थोड़ी देर तक अमरसिंह अन्दाजा लगाता रहा कि उसके बाहर किस तरफ क्या चीज होगी, इसके बाद वह वहां से हटने लगा मगर उसी समय उसे कोठड़ी का दर्वाजा खुलने की आहट सुनाई पड़ी जिससे वह रुक गया। बाहर वाले ताले के खुलने और जंजीर हटने की आवाज आई जिसके बाद ही दर्वाजा खुल गया और फतेहउद्दीन खुद अन्दर आता दिखाई पड़ा। इसे देखते ही अमरसिंह बहुत खुश हुआ और अपना काम पूरा होने की उम्मीद उसे बंधी। उसने अपने कमर में छिपी पिस्तौल निकाल ली, उसका मूठ खोल नली गोली इत्यादि को खूब गौर से देखा, और सब कुछ दुरुस्त पाने

बाद उसे अपने हाथ में ले लिया, इसके बाद वह पुनः छेद में आंख लगा कर देखने लगा कि वह जासूस अब क्या करता है।

फतेहउद्दीन इस बीच उस चौकी पर जाकर बैठ गया था और वहां रक्खी पेटी को खोल उसके अंदर कोई चीज खोज रहा था। अमरसिंह को इससे बढ़ कर और कोई मौका नहीं मिल सकता था। जिसका खून करने वह आया था वह उसके सामने बैठा था। उसने अपनी आंख उस छेद से हटा ली और पिस्तौल की नली उस जगह लगा निशाना साधने लगा। इस तरह के कितने ही मौके उसे पड़ चुके थे अस्तु उसे निशाना ठीक करने में कोई अधिक तरद्दुद न हुआ। बहुत जल्दी ही उसने सब कुछ ठीक कर लिया और तब घोड़े पर उंगली रक्खी।

(२)

नजदीक ही था कि पिस्तौल का घोड़ा दब जाता और सरकार का एक नमकहलाल नौकर 'रक्त-मंडल' की बदौलत दुनिया से कूच कर जाता कि अमरसिंह के कान में एक नये आदमी का स्वर पड़ा जो अभी अभी उस कोठड़ी के दर्वाजे के बाहर आकर खड़ा हुआ था और 'खां साहब, खां साहब' कहके पुकार रहा था। इस आवाज ने अमरसिंह पर इतना गहरा असर किया कि उसका हाथ कांप गया और उसने पिस्तौल की नली छेद पर से हटा पुनः अपनी आंख उस जगह लगा दी।

सचमुच ही एक नया आदमी उस कोठड़ी में आ गया था

जिसका स्वागत करने को फतेहउद्दीन उठ खड़ा हुआ था। अमरसिंह ने भी इस आदमी को देखा और पहिचाना। यह स्वयम् उसका पिता और सरकार का दूसरा विश्वासी जासूस रघुबीरसिंह था। बड़े आदर के साथ फतेहउद्दीन ने रघुबीरसिंह को अपनी जगह गद्दी पर ले जाकर बैठाया और उनके बैठ जाने पर आप सामने बैठता हुआ बोला, "आज इस बेवक्त आपसे मुलाकात होने की बिल्कुल उम्मीद न थी!"

रघुबीर०। (उदास स्वर में) हां आज मैं आपसे आखिरी मुलाकात करने आया हूँ।

फतेह०। (चौंक कर) आखिरी मुलाकात! इसके क्या मानी?

रघु०। यही कि मैंने अपनी नौकरी से इस्तीफा दे दिया।

फतेह०। हैं! इस्तीफा दे दिया!!

रघु०। हाँ।

फतेह०। अरे अरे! सो क्यों? कब? किस लिए?

रघु०। आज, अभी, इसीलिए कि मेरे अफसर ने मेरा कहना मंजूर न किया।

फतेह०। मेरी तबीयत घबरा रही है, जो कुछ भी बात हो खुलासा कहिए।

रघुबीर०। सुनिये मैं थोड़े में कहता हूँ। यह तो आपको मालूम ही है कि मैं आजकल 'रक्त-मंडल' का भेद जानने और उसके अड्डों का पता लगाने के काम पर मुकर्रर किया गया हूँ।

फतेह० । हां हां, सो मैं अच्छी तरह जानता हूं, और मुझे यह भी मालूम है कि आपने उसके कई भेदों का पता बड़ी खूबी और चालाकी से लगाया है ।

रघुबीर० । खैर तो कल शाम को मुझे पता लगा कि उस शैतान मंडली ने अब इस शहर के रहने वालों का आपस का दंगा फसाद और भी बढ़ा देने का इरादा किया है जिसके लिये आज उसकी तरफ से शहर भर में बहुत से हथियार बांटे जायेंगे और कल आम बलवा कराया जायगा । यह खबर लेकर मैं साहब कमिश्नर से मिला और सब हाल सुना कर उनसे प्रार्थना की कि कुछ आदमी मुझे दें जिसमें मैं उनके अड्डे पर धावा करूं और वहां के सब लोगों को गिरफ्तार कर लूं जिनका यह इरादा है, पर उन्होंने ऐसा करने से इन्कार कर दिया । मैंने उन्हें बताया कि अगर वे आज ही उन कम्बख्तों को गिरफ्तार न करवा लेंगे तो कल इस शहर में बड़ा भयानक दङ्गा मच जायगा और सैकड़ों जानें जायंगी, पर वे रुखाई से बोले—"शहर का इन्तजाम मेरे जिम्मे है तुम्हारे जिम्मे नहीं । पुलिस और फौज काफी मजबूत है और अगर दङ्गा हुआ तो शहर की बखूबी हिफाजत कर सकेगी ।" बात ही बात में और भी कुछ कहासुनी हो गई और नतीजा यह हुआ कि मैंने इस्तीफा दे दिया ।

फतेह० । आपने बड़ी जल्दीबाजी की, साहब कमिश्नर का आपको मदद देने से इन्कार करना बेवजह न था ।

रघुबीर० । (ताज्जुब से) सो क्यों ? इसकी क्या कोई खास

वजह भी हो सकती है ? क्या आप इस बारे में कुछ जानते हैं और मुझे बता सकते हैं कि इसके भीतर क्या कोई भेद है ?

फतह०। हां हां, मैं बखूबी जानता हूं और बता भी सकता हूं।

रघुबीर०। तो जल्दी कहिये, मैं सुनने के लिये आतुर हूं।

"मैं अभी आपको बताता हूं" कह कर फतहउद्दीन थोड़ी देर के लिए रुक गया। अमरसिंह बड़े गौर और दिलचस्पी से यह सब बातें सुन रहा था। थोड़ी देर बाद फतहउद्दीन ने कहा, "आपको शायद मालूम होगा कि मैं भी कुछ दिनों तक उस कम्बख्त रक्त-मंडल का हाल जानने की कोशिश में लगा हुआ था। ठीक ठीक तो मुझे मालूम न हो सका मगर उसके दो मोहरों को मैं अपने झांसे पट्टी में ले आया और बहुत कुछ ऊंच नीच समझा कर मैंने उनके दिल में यह बात नक्श कर दी कि अगर इस मुल्क को आजाद करना चाहते हो तो यहां की रिआया में झगड़ा पैदा कराना चाहिए। जब सब लोग आपस में लड़े झगड़ेंगे तो खून खराबा मचेगा, जोश पैदा होगा, और तब यहां के लोगों की अपनी अपनी ताकत और हिम्मत बढेगी। फिर कुछ दिन के बाद सब लोगों को मिला कर सरकार बहादुर का मुकाबला किया जा सकेगा। खुशकिस्मती से वे दोनों मेरे झांसे में आ गये और उन्होंने ऐसा ही करने की कसमें खाईं। उन्होंने जाकर अपनी मंडली में यह बात फैलाई और बाकी

लोगों को इस बात पर राजी किया। मैंने लौट कर यह हाल कमिश्नर साहब बहादुर से कहा और उन्होंने मेरी बहुत तारीफ की। कुछ ही दिनों बाद इसका असर भी नजर आने लगा और ये सब झगड़े फिसाद होने शुरू हो गए जिन्हें रोकना हुकूमत के हक में नही होगा। बस यही तो असल मामला है।

रघुबीर०। मगर आपने ऐसी बात उन लोगों से क्यों कही ? क्या आपने उस समय यह नहीं सोचा कि इसका कैसा बुरा असर पड़ेगा ?

फतेह०। मुझे यह सब सोचने की जरूरत ? मैं सरकार इंगलीशिया बहादुर का नमकख्वार गुलाम, जो मालिक का हुक्म होगा वही बजा लाना तो मेरा फर्ज है ! जिसमें मालिक का भला हो वही करना तो मुझे लाजिम है !!

रघु०। तो क्या आपको किसी नें ऐसा करने को कहा था ?

फतेह०। और नहीं तो क्या ? खुद साहब बहादुर ने इशारे ही इशारे में एक दिन यह बात मुझसे कही थी।

रघुबीर०। हैं ! साहब बहादुर ने !!

फतेह०। जी हां।

रघुबीर०। लेकिन किस खयाल से ?

फतेह०। क्या यह भी बताना पड़ेगा ? ये अंगरेज लोग बड़े चालाक हैं। ये अच्छी तरह जान गए हैं कि इस मुल्क की रिआया उनसे नाराज हो गई है और उन्हें यहां से हटा देना

चाहती है। इस बात को रोकने के लिए रिश्राया में आपस की फूट फैलाने से बढ़ कर और क्या तर्कीब हो सकती है।

रघुबीर०। (कुछ देर चुप रह कर) मगर ऐसा करते वक्त आपको इस काम की बुराई भलाई तो कम से कम सोच लेनी चाहिए थी? आप देख रहे हैं कि आज सिक्खों और हिन्दुओं में कैसी भयानक तकरार मच गई है, पचासों जानें जा चुकी हैं और अभी सैकड़ों ही जायंगी, कितने ही घर चौपट हो गए और कितने और हो जायंगे, कितनी ही औरतें विधवा हो गईं और अभी कितनी ही होंगी, कितने ही बच्चे भूखे मर गए और कितने मरेंगे। वैसा उपदेश देने के पहिले आपको एक दफे यह सब तो सोच लेना उचित था!!

फतेह०। (हंस कर) मैंने आपसे अर्ज किया कि यह सब सोचना मेरा काम नहीं है। मुझे तो जो हुक्म मिला सो मैं बजा लाया, इनाम में वाहवाही मिली और तरक्की ऊपर से! मुझे अपने काम से मतलब होना चाहिए या लोगों के फायदे नुकसान से? इन बातों की फिक्र रखने की मुझको क्या जरूरत? जो कौमें इतनी बेवकूफ हैं कि बात बात पर भाइयों का गला काटने पर आमादा हो जायं, वे तकलीफ के सिवाय और उठावेंगी ही क्या? हम आप या कोई भी उन्हें अपने पैर में आप ही कुल्हाड़ी मारने से रोक ही क्योंकर सकता है?

रघुबीर०। बड़े अफसोस की बात है कि आप इतने अक्ल-

मंद आदमी होकर भी ऐसी बात कहते हैं ! माना मैंने कि एक विदेशी हुकूमत के प्रति अपनी नौकरी बजा लाना आपका फर्ज था पर अपने बाप दादा के मुल्क और अपनी आत्मा के साथ भी तो आपका कुछ फर्ज था ! आपने अपनी नौकरी बेची है, कुछ अपनी बुद्धि तो नहीं ! कोई काम करने के पहिले अपना और दूसरे का और मुल्क का भला बुरा सोच लेने में कोई बड़ी से बड़ी नौकरी भी बाधा नहीं डाल देती ! आपको ऐसा करने से पहिले यह तो सोच लेना चाहिये था कि आपके इस काम का नतीजा क्या निकलेगा ?

फतेह० । (हंस कर) नतीजा तो मैंने अच्छी तरह सोच ही लिया था ।

रघु० यही कि कौमों में झगड़ा हो जायगा और हजारों जानें जायंगी ?

फतेह० । नहीं, बल्कि यह कि मेरी तरक्की होगी और मुझे बहुत बड़ा रुतबा मिलेगा ।

रघुबीर० । (घृणा के साथ) तो आपने अपनी तरक्की वाह-वाही इनाम और रुतबे के लिये अपने मुल्क के साथ गद्दारी की और उसको धूल में मिला देना पसन्द किया ?

फतेह० । आपके जो जी में आवे आप कहिये मगर मैं तो यही कहूंगा कि मैंने अपना फर्ज अदा किया और मालिक का काम अंजाम दिया । यही नहीं बल्कि आपको भी मैं यही राय दूंगा कि झूठे खयालात में न पड़िये और न मुल्क के पीछे जान

दीजिये। इस मुल्क ने हम लोगों के लिये न कभी कुछ किया है और न अब करेगा, हाँ हमारे आज के हाकिम जनाब चीफ कमिश्नर साहब बहादुर बहुत कुछ कर चुके हैं कर रहे हैं और आगे भी करते रहेंगे। उन्हीं का साथ दीजिये और वे जो कुछ भी हुक्म दिया करें उसे पूरा करते रहिये।

रघुबीर०। अगर वे कहें कि अपने भाई का सिर काट लाओ तो काट लाऊं?

फतेह०। पहिले तो वे ऐसा कहेंगे ही क्यों? और मान लिया जाय कि कहें भी तो खुदा ने आपको जो अक्ल दी है उसे काम में लाइये, मालिक को भी खुश रखिये और......

रघु०। और भाई से भी भले बने रहिये, यानी नमकहरामी कीजिए, दगा और फरेब कीजिये, बेईमानी कीजिये! नहीं, सो मेरे किये न होगा। मैं नौकरी करूंगा तो जी जान से करूंगा और दुश्मनी करूंगा तो वह भी जी जान से। आपकी बातों से मैंने समझ लिया कि हमारी सरकार चाहती है कि इस देश में रहने वाली विभिन्न कौमें आपस में झगड़ती ही रहें ताकि सरकार का पौ बारह बना रहे और उसकी हुकूमत मिटने का डर कभी पैदा न हो। मैं अंगरेजों को नेक ईमानदार रहमदिल और न्यायी समझता था पर अब मुझे अपनी भूल मालूम हुई। आज मैं जान गया कि वे बड़े ही धोखेबाज और......

फतेह०। ठहरिये ठहरिये, अब आप बहुत बढ़ चढ़ कर

बातें करने लगे ! मैंने आपसे यह कब कहा कि हमारी सरकार चाहती है कि यहां की कौमें आपस में लड़ती रहें ?

रघुबीर०। क्यों, अभी आपने कहा न कि चीफ कमिश्नर साहब के इशारे से ही आपने यह काम किया और साहब ने...

फतेह०। बेशक मैंने कहा पर इसके लिये आप बेचारी गरीब-परवर हमारी अंग्रेज सरकार को क्यों बदनाम करते हैं ? मुमकिन है कि कमिश्नर साहब ने किसी और इरादे से वह बात कही हो, अथवा मैंने ही उनका मतलब सही न समझ कर कोई गलती की हो ! बिना सही सही और पूरी पूरी सब बातें जाने लोगों को बुरा भला कहना कहां तक वाजिब है ?

रघुवीर०। (कुछ देर तक चुप रह कर) बेशक आपकी इस बात का मैं कायल हूं। बहुत मुमकिन है कि आपने या कमिश्नर साहब ने हमारी सरकार का सही मतलब न समझा हो ! अच्छा खैर, कोई हर्ज नहीं, मैं हुजूर गवर्नर साहब से मिलूंगा और अपनी बात उन्हें सुनाऊंगा, आप ही जो कुछ होगा पता लग जायगा। अगर हमारी सरकार इस मामले में सनी हुई नहीं है और सिर्फ कमिश्नर साहब ने अपने ही मन से यह सब कार्रवाई की है तो मैं बिना उन्हे बदनाम किये न रहूँगा।

फतेह०। (हंस कर) अच्छी बात है, आप कोशिश कीजिए, लेकिन अगर आपको यह यकीन हो जाय कि हमारी सरकार की यह मंशा कभी नहीं कि यहाँ की कौमें आपस में लड़ें

बलिक वह उनमें मेल और मुहब्बत देखना चाहती है और उसकी तरक्की के ख्वाहा हैं तो क्या करेंगे ?

रघुबीर०। मैं अपना इस्तीफा वापस ले लूंगा और ऐसी सरकार की गुलामी करना अपनी खुशकिस्मती समझूंगा।

फतेह०। तो अगर आपको ऐसा ही करना है तो क्यों आप चीफ कमिश्नर साहब से बुरे बनते हैं ? अपना इस्तीफा फिलहाल वापस ले लीजिए, जाँच के बाद अगर जरूरी समझियेगा तो फिर दे दीजियेगा। अभी से अपने आला अफसर से बुरे बनना और तनखाह से हाथ धोना कौन सी अक्लमन्दी है ?

रघुबीर०। मैं ऐसी तनखाह पर थूकता हूँ जो अपनी आत्मा और देश को बेच कर मिले, न तो मुझे ऐसे रुपए की लालच है और न मुझे साहब बहादुर का ही कोई डर पड़ा है। अगर मैं नौकर भी हूँ तो सरकार इंगलीशिया बहादुर का कुछ कमिश्नर साहब का नहीं। मेरा कहना सुनना भी जो कुछ होगा, लाट साहब से होगा इनसे नहीं। मैं अपनी फरियाद खास लाट साहब से ही करूँगा।

फतेह०। खैर मर्जी आपकी, आप बड़े हैं और अक्लमन्द भी, जैसा मुनासिब समझिये करे, मैं कुछ बोल नहीं सकता।

"अच्छा तो मैं अब चलता हूँ।" कह कर रघुबीरसिंह उठ खड़े हुए। फतेहउद्दीन भी उठ खड़ा हुआ और दोनों आदमी साथ साथ कोठड़ी के बाहर हो गए। दरवाजा बन्द हो गया और कोठडी में सन्नाटा छा गया।

(३)

जो जो विचित्र बातें उसने सुनी थीं उन्होंने अमरसिंह पर कुछ ऐसा असर किया कि उन दोनों के चले जाने के बाद भी वह देर तक उसी तरह सकते की सी हालत मे वहीं खड़ा रह गया। अपने पिता के भाव में अचानक इस प्रकार का अन्तर आया देख उसे आश्चर्य भी हो रहा था और प्रसन्नता भी परन्तु ऐसा क्यों हो गया इसे वह बिल्कुल नहीं समझ पा रहा था क्योंकि उसे यह बिल्कुल नहीं मालूम था कि उसके पिता ने एक सेंध के अन्दर सिर डाल कर रक्त-मंडल की गुप्त बाते सुन ली हैं। वह अपने मन मे सोच रहा था कि एक बार पिताजी से मिलना चाहिये बल्कि यदि हो सके तो उन्हें भी रक्त-मंडल के जाल मे खींच लाना चाहिये।

कुछ देर तक तरह तरह का बाते सोचने के बाद एक लम्बी सांस के साथ अमरसिंह ने अपनी आंखें खिड़की के छेद से हटाई और लौटने के लिए घूमा मगर उसी समय चौंक पड़ा, क्योंकि उसकी निगाह एक दूसरे आदमी पर पड़ी जो न जाने कब और कितनी देर से आकर उसके पीछे खड़ा हो गया था। एक दफे तो वह घबरा गया और उसने अपनी पिस्तौल सीधी की, मगर उसी समय इस आदमी ने रक्त-मंडल का गुप्त इशारा किया जिसे देख उसका हाथ रुक गया और साथ ही उसने यह भी पहिचान लिया कि यह नौजवान रक्त-मंडल का वह सदस्य

जमालुद्दीन है जो मेहतर बन कर प्राय करीब एक महीने से कमिश्नर साहब के यहाँ रहता हुआ इनके भेदों की थाह ले रहा है। अमरसिंह ने खुशी खुशी उसे गले से लगाया और कहा, "भाई जमाल, तुम कब यहाँ आकर खड़े हो गये यह मुझे बिल्कुल मालूम न हुआ!"

नौजवान०। मैं बहुत देर से यहाँ खड़ा हूँ। आप बातें सुनने में इतना मशगूल थे कि मेरा आना आपको बिल्कुल मालूम न हुआ और मैंने भी यह सोच आपको न छेड़ा कि शायद मुझे यकायक देख आपके मुँह से कोई आवाज निकल जाय और कोठड़ी वाले लोग होशियार हो जायँ।

अमर०। मगर क्या तुमने इन लोगों की बातें भी सुनी?

नौजवान०। (सिर झुका कर) हाँ, मैंने अपने वालिद की बुराइयों का पूरा इजहार सुना और उस खुदा को कोसा जिसने मुझे उनका लड़का बनाया!!

कहते कहते नौजवान की आँखों से चौधारे आँसू बहने लगे और वह हिचकियां ले ले कर रोने लगा। पाठक शायद समझ गये हों कि यह नौजवान उस फतेहउद्दीन जासूस का ही एकलौता लड़का था जो अपने दिली जोश को न रोक सकने के कारण बलवाइयों में मिल गया था। अमरसिंह को उसकी यह हालत देख बहुत दुःख हुआ। उसने उसका हाथ पकड़ लिया और पीछे को लौटता हुआ मकान के अन्दर की उसी कोठड़ी में चला आया जहाँ थोड़ी देर पहिले बैठ कर बातें कर चुका था।

जमालुद्दीन की आँखों से अब तक आँसू गिर रहे थे। अमरसिंह ने अपने दुपट्टे से उसकी आँखें पोछीं और प्यार से पीठ पर हाथ फेरते हुए कहा, "मेरे प्यारे भाई, अफसोस की बात है कि हमारी मंडली में आकर भी तुम्हारा दिल अभी तक इतना कमजोर रह गया है कि एक मामूली सी बात पर इस कदर रंज मान रहा है!!"

जमा०। (अपनी डबडबाई आँखों को अमरसिंह के चेहरे पर गड़ा कर) मामूली सी बात? आप इसे मामूली सी बात कह रहे हैं! मेरे वालिद के फरेब और दगा की बदौलत सैकड़ों बेकसूर जानें चली गईं और हजारों मासूम बच्चे रो रहे हैं, और आप इसे मामूली बात कह रहे हैं!!

अमर०। मगर भाई, इसके लिए तुम्हें अफसोस करने की क्या जरूरत है? दुनिया कुछ तुम्हारे या हमारे इशारे पर तो घूम ही नहीं रही है और न हर एक की किस्मत का ठेका ही हम लोगों ने ले रक्खा है!

जमा०। क्या वह मेरा बाप नहीं था जिसकी बदौलत यह सब फसाद खड़ा हुआ और क्या लड़का अपने बाप के जुर्मों से कभी भी एक दम से बरी रह सकता है? आज क्या मैं किसी के सामने सिर उठाने लायक रह गया हूं? आज अगर आप ही के वालिद ऐसा करते तो बताइये आप क्या सोचते?

अमर०। (सिर नीचा करके) भाई जमाल, दिल पर लगी चोट का इलाज बहस की मलहम नहीं है। मैं तुमसे वादाविवाद

करके तुम्हारे हृदय का यह गुमान दूर नहीं कर सकता कि तुम अपने पिता के कामों के लिए बिल्कुल उत्तरदायी नहीं हो। इसके लिये तुम्हें अपने दिल को आप ही समझाना पड़ेगा। तुम अपने को सम्हालो, होश में आओ, और याद रखो कि अपनी आत्मा के सिवाय और कोई भी किसी का न साथी है, न दोस्त, न दुश्मन, न मददगार, और न ही न्यायकर्ता। वास्तव में न किसी का कोई बाप है न बेटा, न माँ है न लड़का, न दुश्मन और न दोस्त। न कोई किसी और के काम के लिए जवाबदेह ही है और न कोई किसी और से किसी काम के लिए कुछ पूछने वाला ही। तुम फजूल ही अपने को सन्देह में डाल रहे हो और अपनी आत्मा को आप ही कष्ट पहुंचा रहे हो। धीरज धरो और होश में आओ।

जमा०। (कुछ शान्त होकर) आप तो सब कुछ कहते हैं, मगर मेरा दिल माने तब तो। आप ही बताइये कि आज अगर आप मेरी जगह होते और मेरे बदले आज आपके कानों में वे बातें जाती जो मैंने सुनी हैं तो आपके दिल पर कैसी गुजरती? आज मेरी जगह अगर आपका बाप सरकार का ऐसा अन्धा पिट्ठलगा होता कि अपने भाइयों के गले पर खुद ही छुरी चलाने को तैयार हो जाता तो मैं पूछता हूँ कि आप क्या करते? क्या आपका सर आज शर्म से नीचा नहीं हो गया होता और क्या आपके हाथ आज उस बाप का गला दबा देने पर आमादा नहीं हो जाते जिसने आपको इस तरह जलील किया॥

अमर०। (एक ठण्ढी साँस लेकर) भाई जमाल, तुम्हारी बातें आज जबर्दस्ती मेरे दिल से एक ऐसा भेद बाहर खींच रही हैं जिसे आज तक सिवाय मेरे एक दिली दोस्त के और किसी ने नही जाना। क्या तुम जानते हो कि तुम्हारे वालिद जिससे बातें कर रहे थे वह कौन आदमी था ?

जमाल०। सूरत तो मैं देख न सका मगर आवाज कुछ कुछ जासूस सरदार रघुबीरसिंह साहब की सी मालूम पड़ती थी।

अमर०। ठीक है, वे सरदार साहब ही थे, और क्या तुम यह भी जानते हो कि मै उनका कौन हूं ?

जमाल०। क्या आप रघुबीरसिंह के कोई रिश्तेदार हैं ?

अमर०। हाँ मैं उनका ही अभागा इकलौता लड़का हूँ !

जमाल०। है ! आप उनके लड़के हैं !!

अमर०। हाँ। (सिर झुका कर) आज बहुत दिनों की बात है जब एक दिन किसी कारण तुम्हारी तरह मुझे भी अपने बाप पर इतना ही क्रोध आया और मैं भी उनका खून करने का विचार करने लगा, मगर मेरे दिल ने मेरा साथ न दिया। मुझे लाचार होकर अपने भाई और गुरु-तुल्य एक व्यक्ति का खून करके अपने बाप की जान बचानी पड़ी और इस काम के बाद मैंने अपने को इतना धिक्कारा कि उसी समय कसम खाई कि इसके बदले में मैं सात सरकारी आदमियों का खून करूंगा और तब अपनी भी जान दे दूंगा। तुम सब लोग जानते हो कि इसके

बाद के कुछ ही महीनों में मैंने किस प्रकार अपनी जान पर खेल कर रामसिंह, रघुनाथदास, गणेशबख्श, गुलामरसूल, कात्यायनीप्रसाद और मल्लारबख्श का खून किया और किस प्रकार इस राज्य का एक एक जासूस आज मेरे नाम से काँपता है। आज मैं—भाई माफ करना—अपनी प्रतिज्ञा का अन्त करके और सातवें जासूस की जान लेकर अपने दिल का बोझ खत्म करके तुम्हारे पिता के पास आया था।

अमरसिंह की बातें सुन जमालुद्दीन ताज्जुब के साथ देर तक उसका मुँह देखता रहा और तब बोला, "सिर्फ एक सवाल मैं किया चाहता हूँ। क्या आप समझते हैं कि एक खून के बदले में छः खून कर लेने पर भी आपके दिल ने आपको माफ कर दिया? और क्या आपके मन में अब उस काम के लिये कुछ भी अफसोस नहीं रह गया है जो किसी वक्त किसी तरह आपसे बन गया था या जिसने आपसे इतने ज्यादे खून करा डाले? क्या अब आपको किसी तरह का कोई भी पछतावा नहीं रह गया?

अमर०। (अफसोस के साथ) नहीं मेरे भाई, मैं सच्चे दिल से यह बात किसी तरह भी नहीं कह सकता। मेरी आत्मा अब भी मुझे धिक्कारती रहती है और मुझको शान्ति तभी मिलेगी जब मैं अपनी भी जान दे दूंगा।

जमाल०। बस तो इसी तरह समझ लीजिये कि मेरा दिल

भी मुझे तब तक माफ न करेगा जब तक कि मैं इस बदनामी के टीके को धो न डालूंगा।

अमर०। (चौंक कर) तो तुम क्या करोगे ?

जमाल०। यह आपको जल्दी ही मालूम हो जायगा, अब इस जिक्र को बन्द कीजिये। बहुत कुछ बातें हो चुकीं और मैंने अपना फर्ज सोच लिया, अब आप यह सुनिए कि मैं यहाँ आपके पास क्यों आया था।

अमर०। खैर वह तो मैं सुनूंगा ही मगर तुम बताओ तो सही कि अब तुम क्या करोगे ?

जमाल०। (हाथ जोड़ कर) मैं आपसे माफी चाहता हूँ, आप यह बात मुझसे न पूछें, मैं इस वक्त ठीक ठीक बता नहीं सकता और आपसे झूठ बोल जाना या बहाना कर देना भी मेरा दिल कबूल न करेगा।

अमर०। (उदासी से) खैर मैं न पूछूंगा, पर इतना कहे देता हूं कि जो कुछ करना खूब सोच समझ कर करना। कहीं ऐसा न हो कि जल्दीबाजी में तुमसे कोई ऐसा काम हो जाय जिसके लिये पीछे अफसोस करना पड़े।

इसका जवाब जमालुद्दीन ने कुछ भी नहीं दिया बल्कि सिर झुका लिया। कुछ देर तक सन्नाटा रहा और तब जमालुद्दीन बोला, "मैं 'भयानक-चार' का एक सन्देसा लेकर आपके पास भेजा गया हूँ और मुझे आपसे यह कहना है कि जो कुछ काम अब तक किये जाते रहे हैं वे सब इस घड़ी से बन्द किये जाते

है। अब जब तक कोई नया हुक्म न हो किसी तरह का खून खराबा या इस तर्ज का कोई भी दूसरा काम नहीं होना चाहिये।"

अमर०। (ताज्जुब से) हैं, हैं! सो क्यों?

जमाल०। उन लोगों को कुछ नई बातें ऐसी मालूम हुई हैं जिससे पिछली सब कार्रवाइयाँ बन्द कर देना जरूरी हो गया है।

अमर०। आखिर वे कौन सी बाते हैं? क्या तुम्हें कुछ भी नहीं मालूम?

जमाल०। एक तो यही बात है कि रघुबीर और महाबीर को जिन बाबाजी ने अपने जात-भाइयों को आपस ही में लड़ा देने का उपदेश दिया था वह बाबाजी असली नहीं बनावटी और इस रियासत के ही कोई जासूस महाशय थे।

अमर०। क्या यह बात 'भयानक-चार' को मालूम हो गई?

जमाल०। हाँ, मगर वे अभी तक यह नहीं जान पाये हैं कि वह जासूस कौन था, यह बात सिर्फ हमीं आपने अभी अभी जानी है।

अमर०। खैर, और क्या बात है?

जमाल०। हमारे बहुत से मुखिया और मठ के सब आदमी पकड़ लिये गये और जल्दी ही और भी कई ऐसी गिरफ्तारियाँ होने वाली हैं जिनसे मंडल की ताकत बहुत ही कम हो जायगी।

अमर०। हैं! हमारे मुखिया गिरफ्तार हो गये और मठ के

सब आदमी भी पकड़े गये !! मगर यह कब की बात है ? अभी कल तक तो ऐसी कोई बात नहीं हुई थी या होने की मुझे खबर न थी ?

जमाल०। यह कल की रात और आज सुबह के बीच का वाकेया है।

अमर०। (अफसोस से) यह तो तुमने बड़ी खराब खबर सुनाई !

जमाल०। जी हां, और इसीलिये कुछ समय के लिये मंडल की कारंवाई बन्द कर देना ही मुनासिब समझा गया है।

अमर०। तो अब मुझे कहां जाना पड़ेगा ?

जमाल०। आप मेरे डेरे पर जाइये।

अमर०। तुम्हारा डेरा कौन सा ? कमिश्नर साहब के बंगले वाला !

जमाल०। जी हां, वहां आप पहिले भी जा चुके हैं। उस जगह इस समय मंडल के कई ऊँचे दर्जे के मेम्बर मौजूद हैं और कुछ ऐसी सलाह बातें हो रही हैं जिनमें आपका रहना बहुत जरूरी समझा गया है, इसीलिये मैं दौड़ाया गया हूं। आप फौरन वहां जाइये और उन लोगों से मिलिये, मैं भी कुछ और काम पूरे करके वहीं आता हूं।

अमरसिंह और जमालुद्दीन में जरा देर कुछ और बातें हुईं और तब दोनों आदमी उस मकान के बाहर होकर दो तरफ को रवाना हो गये।

(४)

चीफ कमिश्नर साहब ने एक अंगड़ाई ली और टेबुल के पास से उठ खड़े हुए। लगातार कई घन्टों की मेहनत नें उनके शरीर और मन दोनों ही को थका दिया था।

वे अपने प्राइवेट रूम की तरफ बढ़ रहे थे कि दर्वाजे पर किसी की आहट पा रुक गये। एक नौजवान अभी अभी वहाँ आकर खड़ा हुआ था जिसने अदब से सलाम किया और इशारा पा भीतर आ गया। साहब ने कुछ बेचैनी के साथ पूछा, "क्यों रामदीन, क्या है ?"

रामदीन और पास आ गया, तब चारो तरफ देख कर धीरे से बोला, "हुजूर, आपको मारने के लिए एक आदमी पिस्तौल लेकर अभी अभी इधर ही को आया है!"

कमिश्नर साहब नें चौंक कर रामदीन की तरफ देखा मगर उसकी सूरत ही गवाही दे रही थी कि जो कुछ उसने कहा है वह बिलकुल सही है अस्तु उन्होंने पुनः पूछा, "वह कौन आदमी है, कहां से आया है, और तुम्हें उसका हाल क्यों कर मालूम हुआ ?"

रामदीन०। मैंने एक पेड़ के ऊपर छिप कर उनकी बातें सुनी हैं। वे लोग दो आदमी थे जिनमें से एक तो फतेहउद्दीन साहब को मारने चला गया और दूसरा आपकी तरफ आया है। जो आपकी तरफ आया वह एक नौजवान आदमी है जिसकी उम्र मुश्किल से पचीस छब्बीस वर्ष की होगी। गोरा रंग है, आँखें

बड़ी बड़ी, मूँछें अभी निकल रही हैं। नाक कुछ मोटी है और दाईं आँख के नीचे किसी तरह का दाग है। बाएँ हाथ की एक उंगली नही है। कपड़ा देहातियों की तरह पहिने है और सिर पर मैला बड़ा सा साफा तथा हाथ में एक लाठी और गठड़ी लिये है। उस पेड़ के पास से वह सीधा आपके बंगले ही की तरफ आया है।

इसमें सन्देह नहीं कि कमिश्नर साहब जीवट के आदमी थे। दूसरा कोई यदि यह सुनता कि कोई आदमी उसे गोली मारने आ रहा है तो शायद घर में छिप जाता या सब से पहिले अपने बचाव की फिक्र करता पर वे इस खबर को सुन बिल्कुल न घबड़ाए। शान्ति के साथ थोड़ी देर तक कुछ सोचते रहे और तब रामदीन से बोले, "तुम कह सकते हो वह इस समय कहाँ होगा ?"

रामदीन०। जी नही, बस वह आपके फाटक की तरफ बढ़ा और मैं पिछले दर्वाजे की राह इधर लपका। मुमकिन है कि वह अभी बाग कि अन्दर न घुस पाया हो। (यकायक चौंक कर) अरे, ओह! वह देखिये वहाँ फाटक पर ही तो खड़ा है!!

जहाँ इस समय ये दोनों खड़े थे उसके पास वाली खिड़की की राह बाग के फाटक का कुछ हिस्सा दिखाई पड़ता था। यका-यक रामदीन की निगाह उधर चली गई और उसने लक्ष्मीकान्त को देख लिया जो उस समय मेहतर बने हुए जमालुद्दीन से

बातें कर रहा था। रामदीन के बताने से कमिश्नर साहब ने भी घूम कर उस तरफ देखा मगर सिर्फ एक ही झलक देख पाये क्योंकि लक्ष्मीकान्त की बात समाप्त हो चुकी थी और वह जमालुद्दीन के बताए हुए स्थान की तरफ चल पड़ा था, पर उन्हें विश्वास हो गया कि रामदीन का कहना सच है। उन्होंने फजूल की बातचीत में समय नष्ट करने की जरूरत न समझी और टेबुल के दराज से एक भरी हुई पिस्तौल तथा कुछ कारतूस निकाल जेब में रखने बाद रामदीन को लिये हुए कमरे के बाहर निकल पड़े, हाँ निकलने के पहले उन्होंने टेलीफान के जरिये पुलिस अफसर मिस्टर पंड्या से कुछ बातें जरूर कर लीं।

(५)

तरह तरह की बातें सोचता हुआ अमरसिंह चीफ कमिश्नर की कोठी की तरफ बढ़ा जा रहा था। यों तो सैकड़ों ही तरह की चिन्ताएं उसे घेरे हुए थीं मगर सब से ज्यादा तरद्दुद उसे जमालुद्दीन की तरफ से था और रह रह कर उसके मन में यही खयाल उठता था कि कहीं वह नौजवान जिसका खून बहुत गर्म है कोई भयानक काम न कर बैठे। अपने बाप फतेहउद्दीन की बदौलत उसे जिस तरह की शर्मिन्दगी उठानी पड़ी थी और उस पर उसे जिस तरह का क्रोध चढ़ा हुआ था उसे देखते जमालुद्दीन का कुछ भी कर बैठना ताज्जुब न था और अमरसिंह को इस समय इसी की चिन्ता सताए हुई थी।

कई लम्बे लम्बे रास्ते तय करता हुआ अमरसिंह शहर के बाहर हुआ और तब कमिश्नर साहब के बंगले की तरफ वाली सड़क पर चला मगर अभी बंगले से दूर ही था कि उसे रंग कुछ कुरंग नजर पड़े। उसने देखा कि बहुत से पुलिस के सिपाहियों ने बाग को चारो तरफ से घेर रक्खा है और कितने ही कंपौण्ड के अन्दर भी इधर उधर घूमते दिखाई पड़ रहे हैं। यह देखते ही उसका माथा ठनका। उसने बंगले की तरफ बढ़ना छोड़ दिया और चक्कर लगाता तथा दूसरी दूसरी सडकों पर से घूमता हुआ दूर ही दूर से टोह लेने लगा।

यकायक बंगले के अन्दर से बार बार पिस्तौलें छूटने की आवाजें आने लगीं। अब अमरसिंह का संदेह एक दम दूर हो गया और उसे विश्वास हो गया कि हो न हो किसी तरह रक्त-मंडल के सदस्यों के कमिश्नर साहब के अहाते के अन्दर होने का पता अफसरों को लग गया है और यह गोलीबारी उन्हीं बीच हो रही है। अमरसिंह अच्छी तरह जानता था कि रक्त-मंडल के सदस्य ऐसे डरपोक नहीं हैं कि बिना लडे भिड़े जंजीर पहिर लेगे। अपने जीने का मोह तो उनमें से हर एक न जाने कब का छोड़ चुका है और इस वक्त भी उनमें से हर एक इस बात के लिये बिलकुल तैयार बैठा होगा कि अपनी जान को जितने महगे दामों पर हो सके बेचे। वह रक्त-मडल की प्रतिज्ञा को भी जानता था जिसके द्वारा इसके सदस्य यह

दृढ़ निश्चय कर लेते थे कि पुलिस के हाथ में पड़ने के पहले अपनी जान दे देंगे। इन सभी बातों को सोच कर अमरसिंह कह सकता था कि आज कमिश्नर साहब के अहाते में भयानक खूनखराबा मचेगा। बिना ठीक टोह लगाये वहाँ जाना मुनासिब न था और इस बात का भी ख्याल था कि सब तरफ से पुलिस द्वारा घिरे बंगले के अंदर जाना सहज भी न होगा अस्तु अमर-सिंह ने अपना इरादा बदल दिया। जहाँ तक बन सका और पुलिस की नजर बच सकी वहाँ तक तो वह अहाते की तरफ ही बढ़ता चला गया परन्तु जब आगे जाने का मौका न रहा तो सभों की नजरें बचाता हुआ एक ऊँचे सखुई के पेड़ पर चढ़ कर चुपचाप बैठ गया जहाँ से अहाते के भीतर क्या हो रहा है यह पूरा पूरा तो यद्यपि न देख सकता था पर बंगले के भीतर और बाहर की पुलिस की कार्रवाई, घुड़सवारों की दौड़-धूप, और सड़क का भी एक काफी बड़ा टुकड़ा उसे अच्छी तरह नजर आ रहा था।

फायरों की आवाजे धीरे धीरे बढ़ने लगीं। रंग ढंग से मालूम होता था कि विद्रोही किसी आड़ की जगह से गोली चला रहे हैं और उनको पकड़ने वाले उनको चारो तरफ से घेर कर आगे बढ़ते हुए उन पर फायर कर रहे हैं। बीच बीच में कभी कभी चीखों की आवाजें भी कानों में आ जाती थीं।

आधे घण्टे तक यही हालत रही । वदूकें और पिस्तौले कभी जल्दी जल्दी छूटती थी तो कभी धीरे धीरे । कभी एक साथ ही कई फायरो को आवाजे आती थी । मगर अब रायफलों की तेज आवाजे भी होने लगी, जिससे अमरसिह समझ गया कि फौज भी आ पहुंची है और उसने भी फायर करने शुरू कर दिये हैं ।

मगर अचानक ही फायरो की आवाजे एक दम बन्द हो गईं । अमरसिह सोचने लगा कि या तो सब विद्रोही मारे गये या फिर गिरफ्तार हो गये । वह असल हाल जानने के लिये बेचैन हो उठा मगर उसका सन्देह शीघ्र ही दूर हो गया जब उसने देखा कि अहाते के एक कोने से यकायक आग की ऊची लपटें आकाश की तरफ उठने लगी । अमरसिह तुरन्त समझ गया कि जिस झोपड़े या कोठरी मे विद्रोही छिपे थे उसमे आग लगा दी गई है । अपने साथियो की दुर्दशा का ध्यान कर अमरसिह की आंखो मे आंसू आ गये पर वह कर भी क्या सकता था ? एकदम लाचार था ।

आंच एक बार तो खूब ऊची हुई और तब कुछ कम होकर धांय धांय जलने लगी । कुछ ही मिनटो बाद यकायक कोई चीज गिरने की जोर से आवाज आई जिस पर अमरसिह को ख्याल हुआ कि शायद कोई दीवार गिरी है । इसके बाद ही कई बार भयानक बमों के फूटने की आवाजें आईं और तब सन्नाटा हो गया । अमर के मुंह से एक 'आह' निकल गई । वह जान गया

कि विद्रोहियों ने अपने बमों के द्वारा अपनी ही जानें दे दीं। उसी ऊँचे पेड़ की डाल पर बैठा वह अपने साथियों की याद में आँसू गिराने लगा।

घण्टे भर तक अमरसिंह उसी तरह बैठा रहा। इस बीच में उसने कई बन्द मोटरों को कमिश्नर साहब के अहाते से निकल कर बाहर जाते देखा जिसमें अवश्य ही जख्मी या लाशें होंगी। थोडी देर बाद घुड़सवार और पुलिस तथा फौज के सिपाही भी लौट गये और तब धीरे धीरे वहां सन्नाटा होने लगा।

पूरे घंटे भर तक अमरसिंह और भी राह देखता रहा और तब पेड पर से नीचे उतरा। चारो तरफ कहीं कोई दिखाई न पडता था। उसका विचार हुआ कि एक बार बंगले की तरफ जा कर टोह लगावे मगर हिम्मत न पडी, अस्तु निराले और सूनसान रास्तों से वह शहर की तरफ रवाना हुआ। इस समय रात हो गई थी और चारो तरफ अंधेरा छा गया था।

अंधेरी गलियों में अमरसिंह अनमना सा घूम रहा था कि यकायक किसी ने उसकी पीठ पर हाथ रक्खा। उसने चौंक कर पीछे देखा और साथ ही अपनी जेब में भी हाथ डाला मगर उसी समय उस अजनबी ने कहा, "डरो मत, जिस तरह मैंने तुम्हें उस लम्प की रोशनी में पहिचान लिया उसी तरह जरूर तुम भी मेरी आवाज से पहिचान जाओगे कि मैं कौन हूं।"

यकायक अमरसिंह के मुंह से निकल गया, "कौन? पिताजी!"

सचमुच ही अमरसिंह को रोकने वाले उसके पिता रघुबीर-सिंह ही थे जिन्होंने अमरसिंह को गले से लगा लिया और तब कहा, "मैं तुमसे मिलने के लिए व्याकुल हो रहा था। भाग्य से ही तुमसे मुलाकात हो गई जिसकी आशा मुझे बिल्कुल न थी।"

अमर०। (ताज्जुब से) मगर आप मुझे खोज ही क्यों रहे थे?

रघुबीर०। सो अभी मैं तुम्हें बताऊंगा मगर पहिले यह कहो कि तुम इस तरह ऐसे भयानक मौके और स्थान पर अकेले क्यों नजर आ रहे हो?

अमर०। भयानक मौके और स्थान से क्या मतलब!

रघुबीर०। क्या तुम्हे मालूम नही कि तुम्हारे सामने वाले महल्लो मे कुछ ही देर पहिले भयानक मार काट मच चुकी है?

अमर०। इन महल्लो में मार काट! सो कैसी और किन लोगों के बीच मे? मुझे कुछ भी मालूम नही!!

रघु०। कुछ ही घण्टे पहिले यहां के हिन्दुओ और सिक्खों में दुबारा भयानक मारकाट हो गई जिसके सबब से सैकड़ों ही जानें गयीं।

अमर०। (ताज्जुब से) है! पर यह तो मुझे कुछ भी नहीं मालूम! मैं तो अभी अभी यो ही घूमता फिरता इधर आ

निकला हूँ बल्कि ताज्जुब कर रहा था कि आज यहां इस कदर सन्नाटा क्यों है।

रघु०। आज शाम को इन महल्लों के रहने वाले आपस में लड़ पड़े और बड़ा गहरा खून खराबा हो गया।

अमर०। मुझे कुछ भी खबर नहीं कि कैसे क्या हो गया, जरा खुलासा बताइये तो मालूम हो।

रघु०। यह जगह ऐसी बाते करने लायक नही है, कही सुभीते से सब हाल सुना दूंगा। मगर इस वक्त तुम बता दो कि कहां से आ रहे हो जो शहर में ऐसी भारी वारदात हो जाय और तुमको खबर तक न लगे ?

अमर०। (कुछ रुकता हुआ) मुझे कमिश्नर साहब के बंगले में जाना था पर जा न सका और इस वक्त उधर ही से चला आ रहा हूँ। आपको उधर की खबर तो होगी ही ?

रघुबीर०। ठीक है मुझे भी यही आशंका थी। हाँ मुझे उधर की सब खबर है।

अमर०। तो क्या आप यह भी बता सकते हैं कि कितने आदमी वहाँ पकड़े गये और कितनों की जानें गयीं ?

रघुबीर०। बागियों के कुल सात आदमी थे जिनमें छः जान से मारे गये, सिर्फ एक नौजवान के बचने की कुछ कुछ आशा की जाती है। पुलिस और फौज के चौदह जवान मारे गये और अड़तीस जख्मी हुए हैं। इसमें शक नहीं कि बागियों

वे जान पर खेल कर लड़ाई की पर इतने आदमियों के मुकाबले में वे कर ही क्या सकते थे ?

अमर ने कुछ जवाब न दिया। आज दोपहर को वह अपने पिता के मुँह से जैसे शब्द सुन चुका था उससे उसको यह तो मालूम हो ही चुका था कि उनकी विचार-शैली बदल रही है फिर भी उनसे भेद की बातें करते वह डरता था अस्तु इस समय भी उसने चुप रहना ही अच्छा समझा मगर थोड़ी देर बाद रघुबीरसिंह खुद ही बोले, "अमर, इससे तुम यह तो समझ ही गये होगे कि ताकतवर अंग्रेजी सरकार के मुकाबिले में सशस्त्र विद्रोह करना कितनी बड़ी मूर्खता है ?"

अमरसिंह ने कुछ जवाब न दिया। वह नहीं चाहता था कि उसके दिल का जोश फूट पड़े और उसके मुँह से कोई ऐसी बात निकल पड़े जिसके लिये पीछे पछतावा हो, मगर रघुबीरसिंह को इस बात का कोई खयाल न था। अमर को चुप देख वे फिर बोले, "अगर थोड़े से लोग चाहें कि डरा धमका कर और पिस्तौलों या बमों के जोर से कुछ कर लें तो यह उनकी महज बेवकूफी है। हमारी गवर्नमेन्ट इतनी कमजोर नही है कि इने गिने पागलों से डर जाय !"

अब अमर से रहा न गया। वह धीरे से बोला, "जब तक हमारे ही देश-भाई हमारे साथ दगा करते रहेंगे तब तक कुछ होना तो बेशक ही मुश्किल है !"

यह सुन रघुबीरसिंह भी कुछ जोश से बोले, "अगर तुम्हें इस बात का खयाल है कि तुम्हारे भाई लोग ही हुकूमत के साथ मिल कर तुम्हारे साथ दगा करते हैं तो बम या पिस्तौल को हाथ लगाने के पहिले तुम अपने भाइयों को ही अपने हाथ में लो और ऐसी फिजां पैदा करो कि कोई सरकार का साथ देने वाला बच हो न जाय। तुम ऐसा नहीं कर सकते, या करना नहीं चाहते, यही इस बात का काफी सबूत है कि या तो साधारण प्रजा तुम्हारे साथ नहीं है और या फिर उसे तुम्हारे दिखायें रास्ते पर चलना मंजूर नहीं है। ऐसी हालत में जो कुछ भी तुम लोग करोगे सब में धोखा उठाओगे, जनता की मर्जी या उसकी राय के खिलाफ जो कुछ भी करोगे उसी में जक उठाओगे, दुनिया तुम्हें पागल कहेगी और तुम्हारे कामों से भलाई के बदले बुराई ही पैदा होगी।

अमर०। (जोश से) नहीं, यह बात नहीं है। हम लोग पागल या बेवकूफ तभी तक कहलायेंगे जब तक हमारी हार होती रहेगी। जैसे ही हम लोगों को कुछ भी सफलता मिलेगी वैसे ही हुकूमत भी राह पर आ जायगी और साधारण जनता भी हमें बहादुर और बुद्धिमान कहने लगेगी। जमाने का तो यह कायदा ही है कि नये और खतरनाक रास्ते से भागना और उस पर चलने वालों को बेवकूफ समझना मगर सफल होते ही उसी रास्ते को अच्छा और ठीक समझना तथा उस पर चलने वालों को हिम्मती बुद्धिमान और कार्य-कुशल जानना।

कारण गलियों और सड़कों पर आदमी दिखाई नहीं पड़ते थे और सभी मकानों के खिड़की और दरवाजे इस तरह बन्द थे मानों उनमें कोई रहता हो न हो। अमरसिंह को लिये रघुबोरसिंह आगे बढे और थोडी ही देर में एक बड़ी सडक पर जा पहुँचे। इस जगह रोशनी थी और दस बोस पुलिस के सिपाही भी घूमने फिरते दिखाई पड रहे थे जिन्हें देख अमर झिझका पर रघुबीरसिंह के धीरे से यह कहने पर कि 'डरो मत और बेधड़क मेरे साथ बढ़ते चले आओ' उनके साथ आगे बढ़ा।

सड़क की हालत साफ बता रही थी कि यहां कुछ ही देर पहिले भयानक खून खराबा मच चुका है। जगह जगह छूरे कटार बरछे भाले और तलवारें पड़ी हुई थीं। स्थान स्थान पर खून के बड़े बडे थक्के दिखाई पड़ रहे थे, और दीवारों पर खून की पिचकारियों के दाग साफ दिखलाई पड़ते थे। यद्यपि प्रायः सभी लाशें और जख्मी पुलिस द्वारा हटाए जा चुके थे फिर भी कहीं कही हाथ पांव आदि कटे हुए पड़े नजर आ जाते थे जिन्हें देख जी सिहर उठता था। जहां तक निगाह काम करती थी सिवाय पुलिस के और कोई भी सडक पर कहीं दिखाई नहीं पड़ता था।

अमरसिंह को लिये हुए रघुबीरसिंह बेधड़क बढ़े जा रहे थे कि अचानक एक अंग्रेज अफसर ने उन्हें पहिचान कर रोका और कहा, "ओहो सरदार साहब हैं। यहां की हालत देखने आये है !!" रघुबीरसिंह जवाब में बोले, "हां ऐसा ही समझिये, मगर जो कुछ देखा उससे कलेजा कांप जाता है !"

अफसर बोला, "हाँ। अब तक साठ लोथे और सवा सौ जख्मियो को मैं भेजवा चुका हूँ और अभी कुछ गलियों की सफाई बाकी है। मगर सब से भारी अफसोस तो खान फतेहउद्दीन के बारे मे है।

फतेहउद्दीन का नाम सुनते ही रघुबोरसिह और अमर ये दोनो ही चमक गये। रघुबोरसिह ने पूछा, "क्यो क्यो, उन्हें क्या हुआ?"

अफसर०। क्या आपको नही मालूम हुआ! इस दगे मे वे जान से मारे गये। (हाथ से बता कर) उस गली के नुक्कड़ पर ही तो उनकी लाश हम लोगो को मिली।

यह बात सुनते ही दोनो आदमी चौंक पड़े। रघुबोरसिह। अफसोस के साथ उस अफसर से इस विषय मे बातें करने लगे मगर अमरसिह से नही रहा गया और वह अपने पिता से कुछ कह कर उस गली की तरफ बढ़ा जिधर फतेहउद्दीन की लाश पाये जाने की खबर उसने सुनी थी। हम नही कह सकते कि किस लिये वह उस तरफ चला और शायद पूछने से वह स्वयम् भी कुछ बता न सकता।

गली के मोड़ पर पहुंच अमरसिह रुक गया। इस जगह इधर उधर चारो तरफ खून के छीटे पड़े हुए थे जिन्हे देख उसके मन में तरह तरह की बातें उठने लगीं और वह वहीं पर खड़ा होकर न जाने क्या क्या सोचने लगा।

यकायक उसके कानों में एक कमजोर आवाज पड़ी—"अमर !" वह चौंक गया, मगर चारो तरफ देखने पर भी उसे कहीं किसी की सूरत दिखाई न पड़ी। वह ताज्जुब में आकर सोच ही रहा था किसने उसे पुकारा कि फिर आवाज आई, "अमर, मैं हूँ, जमाल !" इस बार उसने आवाज पर गौर किया और साथ ही एक अधखुले दरवाजे के भीतर पड़े किसी व्यक्ति पर उसकी निगाह गई। बीच की कुछ सीढ़ियां चढ़ कर वह उसकी तरफ बढ़ा और पास जाते ही खून से लथपथ जमाल पर उसकी निगाह पड़ी। सड़क के लम्प की रोशनी टेढ़ी होकर एक तरफ से आती हुई उसके चेहरे पर पड़ रही थी और साफ बता रही थी कि वह कुछ ही क्षणों का मेहमान है।

जमाल की यह हालत देख अमर की आंखों में आंसू आ गये। वह घुटनों के बल उसके बगल में बैठ गया और जमाल के सिर पर हाथ रख कर बोला, "भाई जमाल, यह तुम्हारा क्या हाल है !"

जमाल रुकते गले से बड़ी मुश्किल से बोला, "बस कुछ दमों का और मेहमान हूं।"

अमर के मुंह से निकला, "अफसोस !" और उसकी आंखों से टपाटप आंसू गिरने लगे। जमाल कुछ देर तक उसकी तरफ देखता रहा और तब धीरे धीरे रुक रुक कर बोला, "भाई अमर......रोओ नहीं......तुम्हें खुश होना चाहिए......मैंने आज......बदला ले लिया।"

अमर ने ताज्जुब से पूछा, "कैसा बदला ?"

जमाल के चेहरे पर हंसी की एक आभा दौड़ गई। उसने भर्राये गले से कहा, "यह सब......खून खराबा..... कराने वाले......का......मैंने......!"

यकायक अमर को वह बात याद आ गई जो जमाल ने चलते समय उससे कही थी। उसने घबड़ा कर पूछा, "जमाल, क्या तुमने......!"

बात पूरी न हो सकी। जमाल का आखिरी वक्त आ चुका था। बड़ी मुश्किल से वह अपना हाथ छाती तक लाया जिसमें एक कटार घुसा हुआ था। उसने कटार के मुट्ठे को पकड़ कर रुकते गले से कहा, "भाई अमर, इस कटार ने बाप बेटे...... दोनों......का खून...पिया है......इसे भयानक चार......तक पहुंचा......देना और......कह देना कि जमाल......बदला लेकर......मरा !!"

एक झटके के साथ जमाल ने कटार छाती में से बाहर खींच ली। खून की एक गर्म पिचकारी अमर के चेहरे पर गिरी। दूसरे क्षण में जमाल इस संसार को छोड़ चुका था।

अमर तब तक भी जमाल की लाश पर झुका हुआ गर्म गर्म आंसुओं से उसके चेहरे को तर कर रहा था जब रघुबीरसिंह ने उसको आवाज दी, "अमर, वहां क्या कर रहे हो? वह कौन पड़ा है?"

अमर ने धीरे धीरे अपना चेहरा जमाल की लाश पर से उठाया। बड़ी कठिनता से उसके मुंह से निकला, "मेरा भाई !"

× × × ×

अमरसिंह से जमाल की मौत का पूरा हाल सुनने के कुछ ही दिन बाद रघुबीरसिंह ने सरकारी नौकरी छोड़ दी और अमरसिंह को लेकर कहीं चले गये। रक्त-मंडल का नाम भी केवल दफ्तरों के कागजों भर में रह गया। धीरे धीरे चारो तरफ शान्ति होने लगी और पागल दिलों की करतूत लोगों की याद से उतरने लगी। जमाना फिर पहिले की तरह चलने लगा।

कहानी के बाकी पात्रों की क्या दशा हुई इसका हाल कोई कुछ भी नहीं बताता, हां एक असफल प्रयत्न और उसके भीषण प्रतिशोध की कहानी सदा के लिए काल-पट पर अवश्य लिख दी गई।

॥ इति ॥

नोट—इसके आगे का हाल जानने के लिये लहरी बुक डिपो, वाराणसी द्वारा प्रकाशित 'लाल-पञ्जा' तथा 'रक्त-मंडल' आदि उपन्यास मंगा कर पढ़िए।